प्रकरण छत्तीस

नगर-नगर और गाँव-गाँव में

लंदन
अगस्त १९७१

संसार के इस सुदुर कोने फ्लोरिडा से, प्रभुपाद न्यूयार्क लौटे और तीन दिन के बाद हवाई जहाज से लंदन चले गये। वहाँ वे बीमार हो गये। १४ अगस्त को उन्होंने तमाल कृष्ण को लिखा,

> मैं यहाँ पिछले चार दिन से बीमार हूँ। धूप नहीं निकल रही है। लगभग हमेशा अँधेरा रहता है और वर्षा होती रहती है। इसलिए इसका बुरा प्रभाव मेरे स्वास्थ्य पर पड़ा है, क्योंकि मैं पहले से गठिया का मरीज हूँ।

प्रभुपाद ने कहा कि वे यात्रा और प्रबन्ध-कार्य से छूट पाना चाहते थे, "यह शरीर वृद्ध है, यह चेतावनी दे रहा है।" किन्तु उन्हें पूरा विश्वास नहीं था कि उनके वरिष्ठ प्रबन्धक बिना उनके प्रोत्साहन के काम चला सकते थे।

प्रभुपाद ने अपने सचिव श्यामसुन्दर से शिकायत की और उसकी और अन्य क्षेत्रीय सचिवों की आलोचना की कि वे प्रभुपाद की पुस्तकों को बड़े पैमाने पर छपा और बेच नहीं रहे थे। "पुस्तकें क्यों नहीं हैं?" प्रभुपाद ने माँग की और श्यामसुन्दर कोई संतोषजनक उत्तर न दे पाने के कारण गिड़गिड़ाने लगा। श्यामसुन्दर ने कहा कि वे भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट के अपने गुरु-भाइयों को तुरन्त लिखेगा।

"बुक ट्रस्ट रखने से क्या लाभ?" प्रभुपाद ने दलील दी। "उन्होंने क्या किया है? बड़ी पुस्तकों (*टीचिंग्स आफ लार्ड चैतन्य, द नेक्टर आफ डिवोशन, श्रीमद्भागवतम्, कृष्ण दि सुप्रीम पर्सनालिटी आफ गॉडहेड*) का कोई स्टाक नहीं है। वर्षों के वादों और योजनाओं के बावजूद, विदेशी भाषाओं में साहित्य नहीं है। संक्षिप्त *भगवद्गीता यथारूप*

का प्रकाशन अभी तक क्यों नहीं हुआ?"

"जी," श्यामसुन्दर ने उत्तर दिया "क्योंकि वे..."

"नहीं, यह तुम्हारा दायित्व है," प्रभुपाद ने चिल्लाकर कहा, "तुमने इसे क्यों नहीं किया?" अपने समक्ष उपस्थित एक सचिव के माध्यम से प्रभुपाद ने संसार-भर के जी.बी.सी. सचिवों को डाँट बताई। जी.बी.सी. का कर्तव्य था कि वह देखे कि प्रभुपाद की पुस्तकें स्टाक में हमेशा रहें, *बैक टु गॉडहेड* पत्रिका नियमित रूप से प्रकाशित होती रहे, सबके हिसाब नियमित रूप से चुकते होते रहें और मन्दिरों में भक्त स्वस्थ जीवन बिताएँ।

"हमारा काम है कि हम देखें कि हमारा विस्तार कैसे हो," प्रभुपाद ने कहा, "शिक्षित दायरों में हम कृष्णभावनामृत कैसे आरम्भ करें। कोई भी दार्शनिक, वैज्ञानिक या शिक्षाविद् आये—हमारे पास सबके लिए पर्याप्त भंडार होना चाहिए। लेकिन इस निद्रापूर्ण और आरामदेह ढंग से काम नहीं होगा। वे कार्य करना मुझ जैसे वृद्ध से सीख सकते हैं, क्योंकि मेरा दृढ़ निश्चय इस प्रकार है : यदि मैं कार्य करते हुए मर जाऊँ, तो श्रेय की बात होगी। ठीक एक योद्धा की तरह जो युद्धभूमि में मरता है, यह उसके लिए श्रेय की बात है। अर्जुन से कहा गया कि, "यदि तू मर भी जाता है, तब भी तू लाभ में रहेगा।"

"प्रकाशन की यह मंद गति घोर निन्दनीय है। मैं अनुवाद क्यों करता जाऊँ, यदि तुम छाप नहीं सकते? तुम कहते हो 'अवकाश ले लीजिए और अनुवाद कीजिए।' किन्तु मैं अनुवाद क्यों करूँ? इसे कोई कभी देखेगा ही नहीं! मैं तुम्हें खंड के खंड दे सकता हूँ। जापान में *दाई निप्पान* है, जो उधार पर छापने को तैयार है। तो तुम क्यों नहीं छपाते? हमेशा 'इसे करना है, इसे करना है' बस। और बड़े लोग शिकायत करते हैं, "या तो वह जाये या मैं जाऊँ।"

"यह बेचैनी, यह विपथन रुकना चाहिए। जब पिता व्यवस्था करता है, तो पुत्र का धर्म सेवा करना है। मैं पिता हूँ, मैं तुम लोगों को हर चीज देता हूँ। तो पुस्तकें प्रकाशित करके तुम मेरी सेवा क्यों नहीं करते? यदि कोई एक पुस्तक भी पढ़ ले या समझ ले, तो उसे कृष्णभावनाभावित बनाने के लिए वह पर्याप्त है। क्या तुम समझ नहीं रहे हो कि यह कितना महत्त्वपूर्ण है?"

"लोग मुझ से हमेशा पूछते हैं, 'क्या अमुक और अमुक पुस्तकें प्रामाणिक हैं?' वे मेरी पुस्तकों में से एक को भी पढ़ने का समय नहीं निकाल पाते, फिर भी वे मेरे गुरु-भाइयों की पुस्तकें माँगते हैं? काम कैसे होगा? *श्रीमद्भागवत* के पहले सर्ग का न सम्पादन हुआ है, न संशोधन, मुद्रण की तो बात ही क्या? इतनी सारी पुस्तकें अमुद्रित पड़ी हैं। तो उन लोगों से कहो : पुस्तकों के खाते से खान-पान पर एक छदाम भी खर्च नहीं किया जायेगा।"

एक दिन इस्कान प्रेस के मैनेजर अद्वैत ने न्यूयार्क से एक अच्छी खबर की सूचना दी : एक सप्ताह में वे दाई निप्पान को पाँच बड़ी पुस्तकों के नेगेटिव भेजने जा रहे थे। इस्कान प्रेस ने जर्मन ईशोपनिषद् भी योरप भेज दिया था। और अन्य विदेशी भाषाओं में भी पुस्तकें तैयार की जा रही थीं। प्रभुपाद खुश हुए, और श्यामसुन्दर ने अपने जी.बी.सी. गुरु-भाइयों को सूचित किया।

> कहना न होगा कि प्रभुपाद में जो हम लोगों का विश्वास कम हो रहा था, उसकी यही सही दवा थी। सुधार होना शुरू हो गया है, तब भी प्रभुपाद हमें प्रोत्साहित करते हैं कि हम ये विवरण लिखा करें, जिससे पुस्तकों के बारे में सारी परिस्थिति का स्पष्ट चित्र मिल सके।

यद्यपि प्रभुपाद का स्वास्थ्य अभी भी दुर्बल था, तथापि उनके उत्साह में यह सुनकर वृद्धि हुई कि उनकी पुस्तकों का मुद्रण हो रहा था। वे *श्रीमद्भागवत* का अनुवाद और भाष्य लिखने में लगे रहे।

रणछोड़ : *एक रात मैं बहुत सवेरे, एक बजे तक बाहर फिरता रहा। जब मैं अन्दर गया, तो मैंने देखा कि प्रभुपाद के सामने वाले कमरे में रोशनी थी और डिक्टेशन की मशीन में उनके बोलने की आवाज मुझे सुनाई पड़ी। मैं इतने आहिस्ते से ऊपर गया, जितना हो सकता था, जिससे प्रभुपाद को पता न लगे कि मैं इतनी देर तक जागता रहा था। लेकिन जब मैं उनके दरवाजे के सामने से निकला, तो मैं इस लोभ को काबू नहीं कर सका कि एक मिनट रुककर मैं सुनूँ। कुंजी के सुराख से मैंने झाँकने का प्रयत्न किया, लेकिन कुछ दिखाई न पड़ा। इसलिए मैं प्रभुपाद की आवाज सुनता रहा, जबकि वे श्रीमद्भागवत की डिक्टेशन दे रहे थे।*

तब अचानक वे रुक गये। मैं समझता हूँ कि वे सोच रहे थे कि आगे क्या कहना है। पर तब मुझे लगा कि वे जान गये थे कि मैं बाहर खड़ा था और दरवाजे से सुन रहा था। मैं डर गया और जितना धीरे से हो सकता था मैं सीढ़ियों से ऊपर चढ़ गया, यद्यपि सीढ़ियाँ चरमरा रही थीं। हर एक सोया हुआ था—केवल मन्दिर ही नहीं, वरन् सारा लंदन शहर। प्रातः का एक बजा था। पर प्रभुपाद जग रहे थे और अनुवाद में लगे थे। वे धीरे-धीरे बोल रहे थे, लेकिन उनकी वाणी में शक्ति और दृढ़ता थी। दिन-भर उन पर व्यवस्था करने और लोगों से मिलने-जुलने का भार पड़ा था, परन्तु तब भी रात में जब उन्हें थोड़ी शान्ति और नीरवता मिल सकती थी, वे जाग रहे थे और डिक्टेशन दे रहे थे।

लंदन में प्रभुपाद ने पाश्चात्य दार्शनिकों पर एक पुस्तक आरम्भ की। उनमें पहला नाम

सुकरात का था। हर दिन सवेरे श्यामसुन्दर महान् दर्शनों की रूपरेखा प्रभुपाद के समक्ष प्रस्तुत करता और कृष्णभावनामृत के दृष्टिकोण से प्रभुपाद घंटों एक-एक दार्शनिक के प्रमुख विचार-बिन्दुओं पर वाद-विवाद करते। हर दिन श्यामसुन्दर सवेरे की परिचर्चाओं को लिखने और अगले दार्शनिक की रूपरेखा बनाने में लगा रहता।

• • •

१४ अगस्त को प्रभुपाद ने जन्माष्टमी मनाई। अगले दिन, जो स्वयं प्रभुपाद का पचहत्तरवां जन्म-दिवस था, एक पेपरबैक पुस्तक प्राप्त हुई, जिसमें प्रभुपाद के शिष्यों द्वारा उनके प्रति श्रद्धांजलियों का संग्रह था। व्यासपूजा श्रद्धांजलियों में से बहुतों में श्रील प्रभुपाद की उन विस्तृत यात्राओं के लिए प्रशंसा की गई थी, जो उन्होंने पतित आत्माओं के उद्धार हेतु की थीं और जो उनके कृपापूर्ण धर्मोपदेश के विस्तृत प्रयोजन के लिए थीं।

> इस वर्ष आप भारत की यात्रा पर जाते रहे, और वहाँ स्वयं व्याख्यान देकर तथा इस्कान की व्यवस्था देखकर आपने हम लोगों को उदाहरण द्वारा आचार्य का अर्थ बताया। और अब आप संयुक्त राज्य और योरप की यात्रा करके भक्तों और केन्द्रों को प्रोत्साहित कर रहे हैं।
>
> इस व्यास-पूजा के अवसर पर हम, आपके बच्चे, आपके चरणों में यथासम्भव अपनी भावनाएँ व्यक्त करने के लिए एकत्रित हुए हैं। आपके आशीर्वाद से १९७१ के इस व्यास-पूजा-समारोह से हम सभी भक्त मिलकर महान् इस्कान के रूप में, बिना किसी दलबन्दी के आगे बढ़ सकते हैं और तन-मन-धन से कार्य सम्पादित कर सकते हैं। हमें आशीर्वाद दें कि हम आपके साहित्य का—कृष्ण के सन्देश का—जो आपने कृपापूर्वक दिया है, पाश्चात्य देशों में वितरण कर सकें और बिना किसी आपसी दुर्भाव के परस्पर सहयोग कर सकें। हम कड़ाई के साथ विधि-विधानों का पालन करें और शुद्ध प्रतिनिधि बनकर रहें। आपकी प्रसन्नता के लिए हम शुद्ध संकीर्तन करें और पत्रिका वितरण करें। श्रील प्रभुपाद की जय हो!
>
> आपके सभी शिष्य प्रार्थना करते हैं कि आप हमारे बीच अनेक वर्षों तक रहें ताकि और हमारे सहयोग से आप *भागवत* के खंडों के लिखने में समय दे सकें, और हम आपके गुरु महाराज के कार्यक्रम और मिशन को पूरा करते रहें।

• • •

प्रभुपाद का स्वास्थ्य खराब बना रहा।

> मैं चार या पाँच दिन बीमार रहा; अब मैं बेहतर हूँ, लेकिन रोग भिन्न रूप में चलता जा रहा है। रात में मैं दो घंटे से अधिक नहीं सो सकता और दिन में कभी-कभी मुझे चक्कर आता है। अन्यथा सब ठीक है। मैं यथापूर्व हरे कृष्ण जपता हूँ और नियमित रूप से अपनी पुस्तकें लिखने में लगा रहता हूँ।

श्यामसुन्दर : *अरविन्द और मैं प्रभुपाद के कमरे के ठीक बाहर सो रहे थे। मैं नीचे की शायिका पर था, और मैंने सुना "श्यामसुन्दर।" सचमुच यह जरूरी आवाज थी, और मैं इस तरह उचककर उठा कि ऊपर की शायिका से मेरा सिर टकरा गया। मैं भागकर प्रभुपाद के कमरे में गया। जब मैं दरवाजा खोल रहा था, प्रभुपाद चौखट पर धड़ाम से गिर पड़े। मैंने उन्हें पकड़ लिया। वे इतने हल्के लगे, जैसे कोई छोटी गुड़िया हो, उनका चेहरा धूमिल हो गया। मैं उन्हें उनके पलंग पर ले गया और मैंने सोचा, "ओह, मेरे भगवान्, यह क्या हो रहा है?"*

वे काँप रहे थे। मैंने ऊपर रखा बिजली का हीटर जलाया और उसे उनके पलंग के पास रख दिया। मैंने उन्हें कम्बलों से ढक दिया और फिर मैं इन्तजार करने लगा। वे मौन थे; उनके नेत्र बन्द थे।

अन्त में उन्होंने कहा, "श्यामसुन्दर जाओ और मेरे लिए कुछ काली मिर्च लाओ।" उन्होंने बताया कि काली मिर्च की लेई कैसे बनाई जाती है। "इसे मेरे माथे पर रगड़ो," उन्होंने कहा। इसलिए मैं भागकर रसोई-घर में गया, लेई बनाई और लाकर मैंने उनके सिर पर लगा दी। मैंने पूछा, "क्या आप... तकलीफ क्या है? मेरे ख्याल से उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। उन्होंने आँखें बन्द कर लीं मानो सोने लगे हों।

मैं उनकी बगल में फर्श पर थोड़ी देर सोया रहा। रात में किसी समय उन्होंने कहा, "तुम अपने कमरे में वापस जा सकते हो। मैं ठीक हो जाऊँगा।" अगले दिन सवेरे आठ या नौ बजे तक वे अपने बिस्तर में पड़े रहे। और तब वे बिल्कुल अच्छे हो गये, मानो कुछ हुआ ही न हो। उनका आत्मा इतना बलवान था कि यद्यपि शरीर पर घातक प्रहार हुए थे, तथापि वे उनसे पूरी तरह बच गये थे। मैं कह सकता हूँ कि यह कोई भौतिक घटना नहीं थी। वे उस चीज से पूर्णतया बच गये थे, जो एक तरह से मृत्यु के निकट की चीज लग रही थी।

• • •

एक दिन मोम्बासा (पूर्व अफ्रीका) के एक भारतीय श्रीमान् आर.बी. पंड्या से मिलने पर प्रभुपाद ने अपनी बीमारी की चर्चा की। श्रीमान् पंड्या ने कहा कि मोम्बासा में सागर-

तट पर उनका एक मकान था, जहाँ हमेशा धूप और गरमी रहती थी और सुहावनी समुद्री हवा चलती रहती थी, वह प्रभुपाद के स्वास्थ्य-लाभ के लिए बहुत अच्छा स्थान था। श्रीमान् पंड्या ने प्रभुपाद को आमंत्रित किया कि वे जब तक चाहें वहाँ रहें। इस आमंत्रण को गम्भीरतापूर्वक लेते हुए प्रभुपाद अफ्रीका जाने के बारे में सोचने लगे—केवल स्वास्थ्य के लिए नहीं, वरन् धर्मोपदेश के लिए भी। तीन महीने पहले प्रभुपाद ने ब्रह्मानंद स्वामी और जगन्निवास को पूर्व अफ्रीका भेजा था, इसलिए उनकी वहाँ की यात्रा से उन्हें प्रोत्साहन मिलेगा, साथ ही प्रभुपाद अफ्रीका महाद्वीप में कृष्णभावनामृत के प्रसार के लिए स्वयं व्यक्तिगत रूप से भी कार्य कर सकेंगे। प्रभुपाद ने भवानंद और नरनारायण को लंदन से मोम्बासा यह देखने के लिए भेजा कि क्या उनके लिए वहाँ रहना सम्भव होगा, जैसाकि श्रीमान् पंड्या का सुझाव था।

जब भवानंद और नरनारायण वहाँ पहुँचे, तो ब्रह्मानन्द स्वामी को, जो पूर्वी अफ्रीका में केवल एक सहायक को लेकर संघर्ष कर रहा था, उनको देखकर और यह सुनकर प्रसन्नता हुई कि प्रभुपाद वहाँ शीघ्र आने वाले थे। इसके पहले ब्रह्मानंद स्वामी फ्लोरिडा में धर्मोपदेश करता रहा था और प्रभुपाद ने उसे पाकिस्तान जाने को लिखा था। वह एक सहायक, जगन्निवास के साथ तुरन्त चल पड़ा था, पहले पेरिस पहुँचा और वहाँ उसने ओरियंट एक्सप्रेस की उड़ान पकड़कर पूर्वी योरप को पार किया। यह सुनकर कि पाकिस्तान में युद्ध की सरगरमी बढ़ रही थी, प्रभुपाद ने फ्लोरिडा से ब्रह्मानंद स्वामी को एक दूसरा पत्र लिखा था कि वह पाकिस्तान न जाये। किन्तु ब्रह्मानंद स्वामी तक वह पत्र कभी नहीं पहुँचा। पाकिस्तान जाते हुए और तुर्की देश में संकीर्तन करते हुए ब्रह्मानंद स्वामी और जगन्निवास को ईसाई मिशनरी होने के सन्देह पर गिरफ्तार करके कई दिनों तक रोके रखकर, जेल भेज दिया गया।

अन्त में ब्रह्मानंद स्वामी और जगन्निवास पाकिस्तान पहुँच गये, जहाँ छात्रों ने उन पर थूका था, उन पर गुप्तचर होने का दोष लगाया था, उन्हें धमकियाँ दी थीं और गालियाँ दी थीं। कई बार सड़कों में लोगों ने उनके माथे से वैष्णव तिलक मिटा दिए थे और उन्हें धमकी दी थी कि वे जनता में प्रकट न हों, अन्यथा उन्हें छुरा भोंक दिया जायेगा। स्थानीय हिन्दुओं ने उन्हें चेतावनी दी थी कि वे यथाशीघ्र पाकिस्तान छोड़कर चले जाँए। इसलिए उन्होंने विवश होकर बम्बई जाने और प्रभुपाद से मिलने का निश्चय किया।

इस बीच, प्रभुपाद ने एक भारतीय समाचार-पत्र में पढ़ा था कि पाकिस्तानी सैनिकों ने ढाका में चार हरे कृष्ण मिशनरियों को मार डाला था। "मैं ब्रह्मानंद के बारे जानने को बहुत व्यग्र हूँ," प्रभुपाद ने लिखा था, "इस खराब खबर के कारण दिन बहुत चिन्ता में कटा और वह अब भी जारी है।"

जब प्रभुपाद को मालूम हुआ था कि ब्रह्मानंद स्वामी सचमुच बम्बई पहुँच गया है, तो उन्होंने उसे तुरन्त मिलने को लिखा। जैसे एक पिता अपने खोए हुए पुत्र से मिलता है, उसी तरह प्रभुपाद ने ब्रह्मानंद को गले लगाया था। "तुमने अपने जीवन की बाजी लगा दी, केवल मेरे आदेश पर," प्रभुपाद ने कहा था। कुछ दिन के बाद प्रभुपाद ने ब्रह्मानंद स्वामी से कहा था, "तुम्हें अफ्रीका जाना चाहिए। यदि तुम जाते हो, तो हमारा विस्तार चारों महाद्वीपों पर हो जायेगा।"

अब, अफ्रीका में धर्मोपदेश करने के बाद ब्रह्मानंद अपने प्रिय गुरु की प्रतीक्षा उत्सुकता से करने लगा।

• • •

नैरोबी
सितम्बर ९, १९७१

जब प्रभुपाद ईस्ट अफ्रीकन एयर लाइंस के ७४७ जेट वायुयान से नैरोबी में उतरे, तो उन्होंने अपने कंधों पर एक ऊनी चादर डाल रखी थी और उनके साथ वही सफेद विनाइल की अटैची थी, जिसे लिए हुए वे सारे संसार में घूम चुके थे। अगल-बगल अपने सचिव और सेवक को लिए और हाथ में छड़ी लिए हुए वे हवाई अड्डे को पार करते हुए टर्मिनल-भवन की ओर बढ़े। उसमें प्रवेश करके वे कपड़े से ढकी कुर्सी में बैठ गये और कीर्तन में शामिल हो गये। बहुत-से भारतीय और अफ्रीकी इकट्ठे होकर यह दृश्य देखने लगे।

कुलभूषण, जो एक पत्रकार और ब्रह्मानंद स्वामी का मित्र था, कुछ प्रश्न लेकर प्रभुपाद के पास आया। उसने प्रभुपाद से पूछा कि वे क्या सिखाने आये थे। प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "आधुनिक सभ्य मानव, कृष्ण या भगवान् के साथ अपना सम्बन्ध भूल गया है, और इसलिए वह कष्ट भोग रहा है। आप हिन्दू हैं, मुसलमान हैं या बौद्ध हैं, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। जब तक आप भगवान् के साथ अपना सम्बन्ध पुनः स्थापित नहीं करते, आप प्रसन्न नहीं रह सकते।"

"क्या आप केवल हिन्दुओं के लिए आये हैं?" श्रीमान् भूषण ने पूछा।

"नहीं," प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "हर एक के लिए।"

श्रीमान् भूषण : "ईस्ट अफ्रीका, विशेषकर केनिया उन देशों में से है, जहाँ मानव-मानव के बीच जातीय मेल-मिलाप बहुत अधिक है। आप केनिया के लिए कौन-सा विशेष सन्देश लाए हैं?"

श्रील प्रभुपाद : "मानव का वही भाईचारा पूर्ण हो सकता है, जब वह कृष्णभावनामृत में हो; अन्यथा वह फिर टूट जायेगा।"

श्रीमान् भूषण : "अतः आपके शिष्य केवल हिन्दुओं तक अपने आपको सीमित न रखकर, सारे अफ्रीका निवासियों तक पहुँचने का विशेष प्रयत्न करेंगे? इस देश में यह बहुत महत्त्वपूर्ण है।"

श्रील प्रभुपाद : "हमारी विधि वही है। किन्तु यह विधि इतनी सशक्त है कि इसका असर हर एक पर होता है। हम किसी नये स्थान में नई विधि नहीं लाते। विधि वही है— विश्वजनीन। इसका असर हर एक पर होगा।"

• • •

नैरोबी में एक रात बिताने के बाद प्रभुपाद और उनका दल अगले दिन एक छोटे-से वायुयान से मोम्बासा पहुँचा। श्रीमान् पंड्या बाहर गये थे, उनके परिवार ने यद्यपि कोई उत्साह नहीं दिखाया, पर उसने श्रील प्रभुपाद के लिए अपना घर खोल दिया। वह विशाल भवन आधुनिक ढंग से बना था, उसके कोने गोलाई लिए हुए थे, खिड़कियाँ पोर्टहोल टाइप की थीं और रहने का कमरा बहुत विस्तृत था जिसका बरामदा महासागर की ओर था।

अपने कमरे में खिड़की के पास खड़े होकर प्रभुपाद ने बेरूज सागर की ओर देखा। नीला आकाश बादलों से रहित था, सफेद रेत वाले सागर-तट पर यत्र-तत्र खजूर के पेड़ खड़े थे। ब्रह्मानंद स्वामी और अन्यों की ओर मुड़ते हुए उन्होंने कहा, "ब्रह्मानंद ने मुझ से कहा था कि यह संसार के सबसे सुन्दर स्थानों में से एक है। अब मैं देख रहा हूँ कि उसने सही कहा था।"

प्रभुपाद पुरानी खांसी के साथ आये थे, लेकिन मोम्बासा में सागर-तट पर टहलने और धूप में आराम करने से उन्होंने शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ कर लिया। लंदन में श्यामसुन्दर के साथ पाश्चात्य दार्शनिकों पर प्रतिदिन विचार-विमर्श का जो कार्यक्रम आरम्भ हुआ था, प्रभुपाद ने उसका सिलसिला बनाए रखा। क्रम से वे सुकरात से चलकर डेकार्टे पर पहुँचे थे।

श्यामसुन्दर : 'वह कह रहा है, 'मैं सोचता हूँ, इसलिए मैं हूँ।' सबसे पहले उसने मालूम किया कि 'मैं हूँ।' सत्य के लिए यह उसका सहज आधार था। उसके समय में कोई वास्तविक सत्ता नहीं थी।"

प्रभुपाद : "किन्तु यह कोई महान् ज्ञान नहीं है। बहुत पहले ऐसे बहुत से लोग हो गये हैं, जो 'मैं हूँ' को समझते थे। इसे *'आत्मानम् मन्यते जगत्'* कहते हैं। एक मूर्ख सोचता है कि अन्य सभी मूर्ख हैं। 'मैं' की पहचान करने वाला वह पहला व्यक्ति नहीं है। कृष्ण कहते हैं, अहं। *"अहं एवासम् एवाग्रे"* मैं आदि था और जब हर वस्तु नष्ट हो जायेगी तब

भी मैं रहूँगा।' हम भी कहते हैं, "मेरा अस्तित्व इस शरीर की रचना के पहले से था और जब यह शरीर नष्ट हो जायेगा तब भी रहेगा।" 'मैं' की यह धारणा भगवान् में है, यह मुझ में है, तो फिर नई चीज क्या हुई?

प्रभुपाद ज्योंही कुछ स्वस्थ हुए, वे धर्मोपदेश के लिए तैयार हो गये। उन्होंने कहा कि मोम्बासा छोटा स्थान था और नैरोबी, जो राजधानी था, धर्मोपदेश के लिए अच्छा रहेगा। इसलिए वे नैरोबी लौट गये।

• • •

नैरोबी
सितम्बर १८, १९७१

नैरोबी में श्रील प्रभुपाद ने प्रदर्शित किया कि संन्यासी को धर्मोपदेश कैसे करना चाहिए। एक महीने तक उन्होंने वैदिक परम्परा का कड़ाई से पालन किया; वे किसी भारतीय मेजबान के घर में तीन दिन से अधिक नहीं रहे। यद्यपि उनके मेजबान उन्हें अच्छे भोजन और आवास की हर सुविधा प्रदान करते थे, पर (तीन दिन के बाद) वे दूसरे के यहाँ चले जाते थे। प्रभुपाद ने कहा कि संन्यासियों के लिए यही नियम है; यह उन्हें शरीर-सुख में अधिक आसक्त होने से बचाता है और मेजबानों के लिए असुविधाजनक नहीं होता।

यों श्रील प्रभुपाद के लिए संन्यास के इन प्रारम्भिक पाठों का अभ्यास निश्चय ही अनावश्यक था, क्योंकि वे परमहंस थे, जो कृष्णभावनामृत की शृंखला में संन्यास का सबसे ऊँचा दर्जा था। शरीर, मन और वाणी, तीनों से कृष्ण की दिव्य सेवा में लगे होने के कारण वे स्वयं ही भौतिक सुखों से विरक्त थे। फिर भी अपने उदाहरण से अपने शिष्यों को शिक्षा देने के लिए उन्होंने वैदिक रीति का पालन किया। वे मधुकरी रीति का अनुसरण कर रहे थे—मधुमक्खी की तरह, जो एक पुष्प से थोड़ा-सा पराग लेती है, और फिर दूसरे पुष्प पर पहुँच जाती है। केवल संक्षिप्त समय के लिए एक स्थान पर रहने के नियम से प्रभुपाद के लिए यह भी सम्भव हुआ कि वे अधिकाधिक परिवारों को कृष्णभावनामृत में शामिल कर सके और ढेरों निमंत्रणों को समुचित आदर दे सके।

प्रभुपाद जहाँ भी जाते थे, वहाँ वे निर्विवाद रूप से गुरु या सम्माननीय साधु माने जाते थे। तो भी वे अपने मेजबानों से घुल-मिलकर उनके मित्र बन जाते थे और परिवार के वयोवृद्ध सदस्य की भाँति व्यवहार करते थे। उनके मेजबान प्रभुपाद के रहने के लिए अपने मकान का सब से अच्छा कमरा, प्राय: अपना शयनकक्ष, देते थे और घर की मालकिन अपनी सहायिकाओं के साथ उनके लिए भाँति-भाँति के व्यंजन बनाती थी। प्रभुपाद की

प्रकृतया कृष्णभावनाभावित चाल-ढाल प्रभावोत्पादक थी और उनका व्यवहार सदैव आभिजात्यपूर्ण होता था। तब भी उनके मेजबान उनकी विनयशीलता पर मुग्ध हा जाते थे। वे तेजी से नैरोबी के बहुत-से परिवारों के मित्र और वैष्णव गुरु बनते जा रहे थे।

नैरोबी में प्रभुपाद का व्यवहार उनके उन थोड़े-से पाश्चात्य शिष्यों के लिए शिक्षाप्रद था, जो उनके साथ गये थे। एक अवसर पर एक श्रीमान् देवजी धामजी ने प्रभुपाद को अपने घर के मन्दिर-कक्ष को अभिमंत्रित करने के लिए आमंत्रित किया। प्रभुपाद ने प्रवेश किया, तो धामजी ने उनके बैठने के लिए मृगचर्म बिछाया। "हम मृगचर्म पर नहीं बैठते," प्रभुपाद बोले, "यह शुद्ध है, पर हमारे वैष्णव न उसे धारण करते हैं, न उस पर बैठते हैं। यह योगियों के लिए है।"

भवानंद : *"श्रीमान् धामजी ने प्रभुपाद से एक सोफा पर बैठने का अनुरोध किया, जो साफ सफेद कपड़े से आच्छादित था। प्रभुपाद बैठ गये और उन्होंने उनके चरण धोए। यह पहला अवसर था, जब मैंने किसी को प्रभुपाद के चरण प्रक्षालन करते देखा। उन्होंने उनके चरणों को पहले दूध से प्रक्षालित किया और इस के पश्चात् जल और गुलाब की पंखुड़ियों से। तब उन्होंने उनके चरणों पर चंदन लगाया, उसके बाद लाल कुमकुम, चावल का चूर्ण और मालती के पुष्प चढ़ाए। कुमकुम से उनके अंगूठे लाल हो गये और अक्षत और नन्हें-नन्हें श्वेत मालती पुष्पों से चरण ढक गये। उसके बाद प्रभुपाद ने प्रवचन दिया। उसके पहले मैंने गुरु के चरणों को कभी नहीं देखा था। यह पहला अवसर था जब मैंने अनुभव किया कि गुरु के चरणों का विशेष महत्त्व होता है और वे विस्मयकारी रूप में सुन्दर हैं।*

• • •

प्रभुपाद को केवल भारतीयों को धर्मोपदेश देने से संतोष नहीं था। वे अफ्रीकी लोगों को धर्मोपदेश देना चाहते थे। भारतीय और अफ्रीकी बिल्कुल अलग-अलग रहते थे। किन्तु, क्योंकि कृष्णभावनाभावित व्यक्ति शरीर के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करता, इसलिए प्रभुपाद ने कहा कि भारतीयों का कर्तव्य था कि वे अफ्रीकियों के साथ अपनी आध्यात्मिक संस्कृति का आदान-प्रदान करें।

प्रभुपाद ने ब्रह्मानन्द स्वामी को जोर देकर कहा कि अफ्रीका में उसका पहला कर्तव्य यह था कि वह अफ्रीकावासियों को कृष्णभावनामृत प्रदान करे। किन्तु तुर्की और पाकिस्तान में कटु अनुभव के कारण ब्रह्मानंद स्वामी नैरोबी में सार्वजनिक कीर्तन कराने में हिचकता था। फिर, अफ्रीकी लोग अधिकांशतः स्वाहिली भाषा बोलते थे। उनकी संस्कृति भिन्न थी और वे इतने निर्धन थे कि पुस्तकें नहीं खरीद सकते थे। इसलिए ब्रह्मानंद स्वामी की समझ में नहीं आ रहा था कि उन्हें प्रभावपूर्ण ढंग से धर्मोपदेश कैसे दिया जाये।

भारतीयों तक पहुँचना उसके लिए सरल और स्वाभाविक था।

किन्तु प्रभुपाद अफ्रीकियों तक पहुँचना चाहते थे। "यह एक अफ्रीकी देश है," उन्होंने सरल भाव से कहा, "वे यहाँ के मालिक हैं। हमें चाहिए कि उन्हें धर्मोपदेश दें।"

प्रभुपाद जिस तरह कृष्णभावनामृत सम्बन्धी हर मामले में करते थे, इस मामले में भी उन्होंने दिखा दिया कि यह कैसे किया जा सकता था। उन्होंने अफ्रीकियों के एक प्रमुख डाउनटाउन क्षेत्र में राधा-कृष्ण मन्दिर का उपयोग किया। उस मन्दिर में एक विशाल कक्ष था, जिसके दरवाजे व्यस्त सड़क की ओर खुलते थे, और प्रभुपाद ने अपने भक्तों से कहा कि इसी कक्ष में कीर्तन करो और दरवाजे खुले रखो। भक्तों ने वैसा ही किया और पाँच मिनट के अन्दर कक्ष लोगों से भरना शुरू हो गया। यह नगर का गंदा इलाका था और जो लोग अन्दर आ रहे थे, वे मैले-कुचैले तथा अनपढ़ थे। किन्तु वे जिज्ञासु थे और प्रसन्नतापूर्वक हँसते, ताली बजाते और नाचते हुए कीर्तन में सम्मिलित हो जाते थे।

ब्रह्मानंद स्वामी हाल छोड़कर पास के घर में गया, जहाँ प्रभुपाद रुके थे। "हाल लोगों से भर चुका है," ब्रह्मानंद स्वामी ने कहा, "किन्तु आपका वहाँ चलना आवश्यक नहीं है। हम स्वतः इस कार्यक्रम को चला सकते हैं।"

"नहीं," प्रभुपाद ने कहा, "मैं जरूर चलूँगा।"

ब्रह्मानंद स्वामी ने उन्हें हतोत्साहित करना चाहा।

"नहीं, मैं चलूँगा" प्रभुपाद ने फिर कहा, "क्या मुझे ले चल रहे हो?"

जब ब्रह्मानंद स्वामी श्रील प्रभुपाद के साथ वहाँ पहुँचा, तो हाल कुछ मिनट पहले की अपेक्षा और अधिक भर चुका था। जब प्रभुपाद छीये प्रकाश वाली व्याख्यानशाला में प्रविष्ट हुए, तो वे अपने रेशमी केसरिया वेश में अत्यन्त तेजस्वी लगे। जब वे आगे बढ़े, तो भीड़ एक ओर हटती गई और उनके लिए अपने बीच से मार्ग बनाती गई और उन्हें अत्यन्त उत्सुकतापूर्वक देखती रही। मंच पर बैठकर प्रभुपाद ने कीर्तन की अगुवाई की और भाषण दिया। यद्यपि स्वाहिली भाषी श्रोता प्रभुपाद का व्याख्यान समझने में असमर्थ थे, पर वे श्रद्धापूर्वक बैठे रहे। और कीर्तन तो उन्हें बहुत प्यारा लगा।

भारतीय समुदाय के लोगों को आशंका थी कि प्रभुपाद अफ्रीकियों के लिए हाल खोल देंगे और कुछ लोग यह देखने के लिए कार्यक्रम में गये थे कि क्या होता है। किन्तु प्रभुपाद के अनुकम्पापूर्ण कार्यक्रम को देखकर भारतीय प्रभावित हुए। स्पष्टतः ऐसे सीधे-सादे कार्यक्रम में सांस्कृतिक सीमाओं को तोड़ देने की आध्यात्मिक शक्ति थी।

प्रभुपाद ने बारम्बार बल दिया कि अफ्रीका में अफ्रीकियों को कृष्णभावनामृत प्रदान करना ही ब्रह्मानंद स्वामी का कार्य होना चाहिए। और कार्यक्रम को सरल रखना चाहिए: प्रसाद-वितरण, मुफ्त पुस्तक-वितरण तथा ढोल और करताल के साथ हरे कृष्ण कीर्तन।

कृष्णभावनामृत को मात्र एक अन्य नैरोबी हिन्दू धार्मिक सभा नहीं होना चाहिए। हिन्दुओं को चाहिए कि वे धन का दान दें, किन्तु ब्रह्मानंद स्वामी का धर्मोपदेश और सदस्य बनाने का कार्यक्रम अफ्रीकियों के बीच होना चाहिए।

जब नैरोबी में कई काले अमरीकी शिष्य प्रभुपाद से आ मिले, तो प्रभुपाद ने उनसे कहा, "चार सौ वर्ष पूर्व तुम्हारे पूर्वज यहीं से दास बनाकर ले जाए गये थे। किन्तु जरा देखो तुम लोग किस तरह स्वामी बनकर वापस आ गये हो।"

• • •

प्रभुपाद ने नैरोबी में प्रथम खुले कीर्तन-कार्यक्रम का भी आयोजन किया। भक्त जन कामकुंजी पार्क के सबसे बड़े वृक्ष के निकट गये, जो केनिया की स्वतंत्रता से जुड़ा हुआ ऐतिहासिक चिह्न था। जब वे वृक्ष के नीचे खड़े होकर कीर्तन करने लगे, तो एक विशाल जन-समूह वहाँ एकत्रित हो गया और बहुत-से लोग कीर्तन करने लगे। कुछ लोग तो अपने आदिवासी ढंग में मिल-जुलकर नाचने भी लगे। एक युवक आगे बढ़ा और ब्रह्मानंद स्वामी के व्याख्यान को स्वाहिली में अनूदित करने को तैयार हो गया। भक्तों ने मीठी बूंदी बाँटी और भीड़ के लोगों को सचमुच आनन्द आया। सारा कार्यक्रम अत्यन्त सफल रहा।

ब्रह्मानंद तेजी से प्रभुपाद के पास आया और उन्हें पार्क में हुए आश्चर्यजनक कीर्तन का विवरण सुनाया। ब्रह्मानंद को वैसी ही उमंग का अनुभव हुआ जैसाकि उसे १९६६ में हुआ था जब उसने न्यूयार्क नगर के वाशिंगटन स्क्वायर पार्क में हुए प्रथम कीर्तन की सफलता का विवरण प्रभुपाद को सुनाया था। वर्तमान में, जैसाकि तब, ब्रह्मानंद स्वामी ने प्रभुपाद के आदेशों का पालन किया था और परिणाम में उसे सफलता मिली थी। प्रभुपाद ने अपने निजी उदाहरण से ब्रह्मानंद स्वामी को प्रेरित करके कुछ ही दिनों में अफ्रीका में धर्मोपदेश का बल भारतीयों से बदलकर अफ्रीकियों के पक्ष में कर दिया था।

• • •

नैरोबी विश्वविद्यालय में जिस रात प्रभुपाद का व्याख्यान हुआ, उस समय सभागार में दो हजार अफ्रीकी विद्यार्थी भरे थे और सैकड़ों बाहर खड़े हुए खिड़कियों तथा दरवाजों से झाँक रहे थे। सर्वप्रथम प्रभुपाद ने अपने एक काले अमरीकी शिष्य, भूतभावन से एक संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत कराया, जिसमें उसने कुछ स्वाहिली वाक्यांशों का प्रयोग किया। उसने आरम्भ किया—"हरम्बे," जिसका अर्थ है, "स्वागत है भाइयों, आओ मिलकर साथ काम करें।" फिर प्रभुपाद बोले।

"सारा संसार केवल लालच में फँसा है और शोकमग्न है। तुम अफ्रीकी लोग

योरपियनों और अमरीकियों की तरह बनने को लालायित हो। किन्तु योरोपियनों ने अपना साम्राज्य खो दिया है। अब वे पछता रहे हैं। इस तरह एक लालायित है, और दूसरा पछता रहा है।...

"हम इन अफ्रीकी देशों में सभी बुद्धिजीवी अफ्रीकियों को आमंत्रित करने आये हैं कि वे हमारे पास आयें और इस विचारधारा को समझें तथा उसका वितरण करें। तुम अपना विकास करने का प्रयास कर रहे हो, तो ठोस ढंग से विकास करो। किन्तु अमरीकियों और योरपियनों का अनुकरण मत करो, जो कुत्तों और बिल्लियों की तरह रह रहे हैं। ऐसी सभ्यता स्थायी नहीं हो सकती। वहाँ परमाणु बम पहले से ही तैयार है। ज्योंही अगला युद्ध आरम्भ हुआ कि सारे गगनचुम्बी भवन और सब कुछ नष्ट हो जायेंगे "तुम लोग वास्तविक दृष्टि-कोण से मानव-जीवन के सही पक्ष को समझने का प्रयत्न करो। यह सही दृष्टि कृष्णभावनामृत आन्दोलन है और हम आपको आमंत्रित करते हैं कि आप इस विचारधारा को समझने का प्रयास करें। आपको बहुत-बहुत धन्यवाद।"

श्रोता तालियाँ बजाने लगे और प्रभुपाद के सम्मान में खड़े होकर वाह-वाह करने लगे। लोगों की प्रतिक्रिया ने एक बार फिर सिद्ध कर दिया कि कृष्ण का सन्देश उनके हृदयों को छू गया था; यह सन्देश राजनीतिक, भौगोलिक या सामाजिक भेदभाव से रहित होकर समस्त लोगों के लिए था। जब प्रभुपाद पहले नैरोबी हवाई अड्डे पर उतरे थे, तो उन्होंने एक संवाददाता को विश्वास दिलाया था कि वे अफ्रीकी लोगों को भी धर्मोपदेश देंगे। और अब वे वैसा ही कर रहे थे। वे अफ्रीकियों को वही सन्देश दे रहे थे और वही भक्ति की विधि बता रहे थे, जो उन्होंने अमरीकियों को दी थी। जो कुछ अमरीकी चाहते थे और जो कुछ अफ्रीकी चाहते थे, वह केवल कृष्णभावनामृत से ही मिल सकता था। कृष्णभावनामृत कहीं भी कारगर हो सकता है, यदि सत्यनिष्ठ और बुद्धिमान लोग आगे बढ़कर उसके प्रसार में योग दें।

प्रभुपाद का बाहर व्याख्यान देने का कार्यक्रम जारी रहा। लोकप्रिय टी. वी. कार्यक्रम *मम्बोलियो* में सम्मिलित होते समय प्रभुपाद ने भगवान् चैतन्य का एक चित्र दिखाया, जिसमें वे अपने भक्तों के साथ नाचते हुए कीर्तन कर रहे थे। भेंटकर्ता ने प्रभुपाद से पूछा कि चित्र में केवल *काकेशियन* ही क्यों दिखाए गये थे। "भारत में कई रंग के लोग हैं," प्रभुपाद ने उत्तर दिया।

"और केन्द्र में यह किस का चित्र है?" भेंटकर्ता ने पूछा।

"ये श्री चैतन्य महाप्रभु हैं," प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "वे भगवान् हैं।"

"वे भगवान् नहीं हो सकते," उस लम्बे, स्थूलकाय व्यक्ति ने प्रतिकार किया, "वे भगवान् हैं, से आपका क्या तात्पर्य है? यह तो एक मानव हैं।"

किन्तु प्रभुपाद भेंटकर्ता से भी अधिक आक्रामक बन गये। "आप क्यों कहते हैं कि वे मानव रूप में नहीं आ सकते? भगवान् मानव रूप में क्यों नहीं आ सकता?"

नैरोबी के एक अन्य व्याख्यान में प्रभुपाद ने बल दिया कि शान्ति केवल आध्यात्मिक मंच पर सम्भव थी। केवल कृष्णभावनामृत ही वर्तमान गुटों को जोड़ सकता था।

"उदाहरण के लिए, अफ्रीका में भारतीय अपनी विधियों से सन्तुष्ट हो सकते हैं, किन्तु अफ्रीकी सन्तुष्ट नहीं हैं। इसलिए भौतिक जीवन में यदि एक असन्तुष्ट है, तो दूसरा सन्तुष्ट होगा और फलतः अशान्ति होगी। किन्तु यदि आप कृष्णभावनामृत के मंच पर आते हैं, यदि आप स्वयं को श्री भगवान् की दिव्य प्रेमाभक्ति में लगाते हैं, तो आपका मन और आत्मा दोनों पूर्णतः सन्तुष्ट होंगे।"

प्रभुपाद ने आगे अफ्रीकियों की सहायता के लिए अपनी योजनाएँ बताईं।

"हम अफ्रीका में न केवल भारतीयों या हिन्दुओं को, वरन् यहाँ की स्थानीय जनता को भी शिक्षा देने आये हैं। मुझे प्रसन्नता है कि हमारे भक्त सड़कों में संकीर्तन कर रहे हैं—जैसाकि हम लंदन, न्यूयार्क और संसार के सभी बड़े नगरों में करते हैं। हम अपने संकीर्तन दलों को सड़कों से ले जाने का प्रयत्न करते हैं और स्थानीय अफ्रीकी लड़के, लड़कियाँ और संभ्रान्त लोग एकत्र होते हैं। वे इस आन्दोलन को स्वीकार कर रहे हैं।

"अतः कृष्णभावनामृत को सर्वत्र प्रसारित करने की सम्भावना है। यह आन्दोलन यहाँ आया है, इसलिए जो लोग यहाँ उपस्थित हैं, उनसे मैं प्रार्थना करता हूँ कि वे कृष्णभावनामृत आन्दोलन से सहयोग करने का प्रयत्न करें। और जैसाकि आपने स्वयं अनुभव किया है, मुझे विश्वास है कि अफ्रीकी लड़के और लड़कियाँ इस आन्दोलन में सम्मिलित होंगे। अमेरिका में बहुत-से अफ्रीकी लड़के और लड़कियाँ हमारे विद्यार्थी हैं। इसलिए कोई कठिनाई नहीं है।

"ऐसा नहीं है कि चूँकि कोई बहुत व्यस्त है, इसलिए वह ईश्वर की सेवा नहीं कर सकता। या कोई निर्धन है, काला है या श्वेत है, इसलिए वह ईश्वर की सेवा नहीं कर सकता। नहीं, जो कोई भी शुद्ध प्रेमाभक्ति की विधि अपनाता है, उसे रोका नहीं जा सकता।"

प्रभुपाद ने अपने श्रोताओं से नैरोबी में एक केन्द्र की स्थापना के लिए भी भक्तों की सहायता करने का अनुरोध किया।

"हमारे पास रहने के लिए एक स्थान होना जरूरी है। यदि रहने का स्थान नहीं है, तो हम आन्दोलन कैसे चला सकते हैं? इसलिए आप तुरन्त हमारी सहायता करें। हमें रहने का स्थान दीजिए और देखिए कि हमारा कार्यक्रम कैसे आगे बढ़ता है। आप इस आन्दोलन की परीक्षा ले चुके हैं और आपने पाया है कि सारे संसार में इसे सफलता मिली है। तो

अफ्रीका में क्यों नहीं मिलेगी? हम कोई सम्प्रदायवादी नहीं हैं। हम इसका विचार नहीं करते कि कोई अफ्रीकी है या अमरीकी है।"

नैरोबी में प्रभुपाद ने तंजानिया के एक नये कानून के बारे में सुना कि दस साल बाद वहाँ सभी निजी सम्पत्ति स्वत: राज्य की सम्पत्ति बन जायेगी और सम्पत्ति के स्वामी अपनी सम्पत्ति का केवल दस प्रतिशत मूल्य पाने के हकदार होंगे। प्रभुपाद ने कहा कि यह एक विशेष कलियुगी कानून था। राज्य ऐसा कानून बना देता है, जिसमें कोई औचित्य नहीं होता और जिससे नागरिकों को कोई लाभ नहीं होता। उन्होंने कहा कि राज्य को नागरिकों का संरक्षण करना चाहिए। वैदिक इतिहास में दैत्यराज वेन के कुशासन में साधु और ब्राह्मण क्षुब्ध हो गये थे और उन्होंने उसे दंडित किया था। साधुओं का कर्तव्य है कि वे यह सुनिश्चित करें कि राजा का शासन न्यायपूर्ण हो। किन्तु वर्तमान समय में संसार में कहीं भी राजनीतिक व्यवस्था ठीक नहीं है। समाज को दिशा-बोध कराने के लिए संतुलित विचारधारा नहीं है।

"हमें चाहिए कि हम हस्तक्षेप करना शुरू कर दें," प्रभुपाद ने जोर देकर अपने शिष्यों से कहा। "अब हमारी संख्या पाँच सौ हो गई है। और हम में से हर एक के पास पचास वर्ष हैं। इसलिए सोचो कि हम क्या कर सकते हैं। लेकिन तुम सबको मेरी भाँति समर्पित होना है। कभी-कभी वैष्णवों की उनकी निष्क्रियता के लिए आलोचना की जाती है। किन्तु अर्जुन और हनुमान वैष्णव योद्धा थे। मेरे गुरु महाराज ने कहा था कि जब हाईकोर्ट के न्यायाधीश तिलक लगाने लगें, तो समझो कि हम सफल हो गये। मेरे गुरु-भाई कुछ मन्दिर चाहते हैं, उन्हें कुछ चावल, कुछ खाने को और कीर्तन चाहिए। किन्तु हमारे लिए पहले कार्य तब समाधि।"

समाधि शब्द से उस आत्मविस्मृति की अवस्था का निर्देश है, जिसमें व्यक्ति कृष्ण में पूर्णतया लीन हो जाता है और भौतिक संसार और सभी भौतिक इच्छाओं को भूल जाता है। साधारणतया समाधि की कल्पना एकांत चिन्तन के रूप में की जाती है; बहुत आगे बढ़ा हुआ योगी किसी एकान्त शान्त स्थल में जाता है और निरन्तर चिन्तन और जप करता है। किन्तु प्रभुपाद ने अपने जीवन के उदाहरण से दिखा दिया कि विश्व-स्थिति की अपेक्षाएँ इतनी आवश्यक थीं कि किसी भक्त को अवकाश ग्रहण करके चिन्तन करने का समय नहीं था। वरन् उसे कृष्णभावनामृत आन्दोलन को बढ़ावा देने के लिए कड़ा परिश्रम करने की आवश्यकता थी। इससे भक्त और मानव समुदाय दोनों का लाभ था। इसलिए प्रभुपाद के शिष्यों को अपने गुरु के सेवकों के रूप में इस समय कार्य करना चाहिए; बाद में वृद्धावस्था में आध्यात्मिक परिपक्वता प्राप्त कर लेने पर वे सन्यस्त होकर किसी पवित्र स्थान में जा सकते थे और वहाँ निरन्तर चिन्तन और कृष्ण का भजन-श्रवण कर सकते थे।

प्रभुपाद ने कार्य पर बल दिया। तो वह कार्य क्या था? कम-से-कम प्रभुपाद के लिए, कृष्णभावनामृत का प्रसार करना ही समाधि थी। समाधि को एकांत स्थान में बैठने तक सीमित नहीं रखना था। समाधि का पूरा अर्थ था लीन होना, इन्द्रियों, मन और बुद्धि को आत्मविस्मृति में डुबोकर कृष्ण की प्रेमाभक्ति में पूर्णतः लीन होना। इस प्रकार समाधि में कोई व्यक्ति क्रियाशील हो सकता था—यात्रा करते हुए, धर्मोपदेश करते हुए, *बैक टु गॉडहेड* पत्रिका का वितरण करते हुए और सड़कों में कीर्तन करते हुए। यदि कोई भक्त हमेशा कृष्ण के बारे में सोचता रहे और उनके निमित्त कार्य करता रहे तो वह सर्वश्रेष्ठ योगी है। भगवान् कृष्ण का भी अर्जुन को यही उपदेश था—"मेरा स्मरण करो, और साथ ही युद्ध करो।" प्रभुपाद सक्रिय समाधि के प्रतीक थे—वे हमेशा कृष्ण के बारे में सुनते रहते थे, उनकी महिमा गाते रहते थे और उनका स्मरण करते रहते थे और भगवान् चैतन्य की ओर से एक सैनिक की तरह सदैव संघर्ष-रत थे।

नैरोबी में प्रभुपाद का धर्मोपदेश विशेष रूप से सक्रिय रहा। उन्होंने एक नये नगर में कृष्णभावनामृत स्थापित कर दिया था; इस प्रकार ब्रह्मानंद स्वामी के अनुकरण के लिए एक उदाहरण, और अफ्रीका के पूरे महाद्वीप में कृष्णभावनामृत के प्रसार के लिए एक मानक प्रस्तुत कर दिया था। और श्यामसुन्दर अपने जी.बी.सी. के गुरु-भाइयों को प्रभुपाद के विस्मयकारी कार्यों की सूचना देता रहता था।

> हमारे कदम बिजली की गति से बढ़ रहे हैं और कृष्णकृपामूर्ति अपने कार्य का एक और भी नया क्षेत्र खोल रहे हैं। लोग जिज्ञासापूर्वक उमड़ते आ रहे हैं और गम्भीर प्रश्नों की...
>
> एक दिन, रात में देर से व्याख्यान समाप्त करने के बाद प्रभुपाद ने भोजन माँगा और कहा—"तुम देखते हो कि मैं भूखा हूँ। मुझे बोलते रखो, यही मेरा जीवन है। मुझे बोलने से रुकने न दो..."

किन्तु नैरोबी एक महाद्वीप के एक देश का केवल एक नगर था और प्रभुपाद की अभिलाषा कृष्णभावनामृत को संसार के हर नगर, हर कस्बे और हर गाँव में देखने की थी। वे एक जीवन-काल में यह सब कैसे कर सकते थे—संसार के हर नगर की यात्रा, हर भाषा में पुस्तकों का प्रकाशन और वितरण और वैभवपूर्ण मन्दिरों का निर्माण? वे नहीं कर सकते थे। पर कृष्ण ने उनके लिए जो समय निर्धारित किया था, उसमें जितना सम्भव था उतना वे कर जाना चाहते थे, जिससे कि कृष्णभावनामृत आन्दोलन जीवित रह सके। वे राजनीतिज्ञों की इस आम प्रवृत्ति की आलोचना करते थे कि यदि वे स्वयं सक्रिय नहीं

रहेंगे, तो उनके किये सारे कार्य विनष्ट हो जायेंगे। ऐसे राजनीतिज्ञ अवकाशग्रहण करने के लिए सदा अनिच्छुक रहते हैं, और जीवन की अन्तिम सांस तक अपने पदों पर बने रहना चाहते हैं। परन्तु प्रभुपाद की अपनी कोई व्यक्तिगत अभिलाषा नहीं थी और वे जानते थे कि फल तो कृष्ण के हाथ में था। एक सच्चे संन्यासी की तरह उन्होंने संसार और सांसारिक अभिलाषाओं का त्याग कर दिया था। किन्तु वे आलसी नहीं हुए थे।

वयोवृद्ध होने पर भी वे अपने उद्देश्य की पूर्ति में लगे थे और कृष्ण उन्हें उनके प्रयासों का फल दे रहे थे। इसलिए प्रभुपाद कृष्ण की कृपा के उत्तर में कृष्णभावनामृत आन्दोलन का विस्तार करने के लिए लगातार कार्य कर रहे थे। यह जानते हुए कि भगवान् कृष्ण संसार को भगवत्प्रेम से परिप्लावित देखना चाहते थे, श्रील प्रभुपाद ने इसके लिए सच्चे मन से प्रयत्न किया था। इसका आरम्भ उन्होंने न्यूयार्क नगर के एक स्टोरफ्रंट से किया था। और कृष्ण ने उसका प्रत्युत्तर कुछ लोगों को और किराया चुकाने के लिए पर्याप्त धन भेजकर दिया था। तब श्रील प्रभुपाद ने और अधिक करने का प्रयत्न किया था और कृष्ण ने उसी तरह उनकी और सहायता की थी। इस तरह एक दूसरा इस्कान केन्द्र, तब तीसरा, तदनन्तर चौथा और उत्तरोत्तर बहुत-से केन्द्र खुल गये थे और पुस्तकों का प्रकाशन आरम्भ हो गया था। श्रील प्रभुपाद कृष्ण की कृपा के प्रेमपूर्ण उत्तर में अधिकाधिक प्रयत्न करते गये थे।

अब यह केवल एक व्यक्ति का कार्य नहीं रह गया था। श्रील प्रभुपाद अपने कार्य का भार अब अपने शिष्यों को सौंप रहे थे। और यदि वे शिष्य सचमुच सहायता करना चाहते थे, तो उन्हें प्रभुपाद का निस्वार्थ सेवा-भाव अपनाना होगा।

किन्तु जब भक्तों ने प्रभुपाद की विकासशील योजनाओं का अनुसरण करने का प्रयत्न किया, तो वे डगमगा गये। थोड़े-से शिष्यों के लिए किसी नगर में एक मन्दिर का संचालन करना भी बड़ा भारी कार्य था, और प्रभुपाद थे कि इससे सैकड़ों गुना कार्य का सम्पादन कर रहे थे; वे चाहते थे कि जो आन्दोलन उन्होंने आरम्भ किया था, वह हजारों वर्ष तक चलता रहे और उन्हें विश्वास था कि जब तक उनके शिष्य शुद्ध बने रहेंगे और उनके निर्देशों की सीमा में कार्य करते रहेंगे, तब तक वे सफल होंगे।

यद्यपि वर्तमान कलियुग सभी युगों से खराब था, जिसमें लोगों की आध्यात्मिक जीवन में कोई रुचि नहीं थी, परन्तु प्रभुपाद का प्राचीन आचार्यों की इस भविष्यवाणी में विश्वास था कि संसारव्यापी प्रभाव के स्वर्णिम युग में कृष्णभावनामृत का प्रवेश अवश्यंभावी था। सच, यह सबसे खराब युग है, तो भी कृष्ण के पवित्र नाम के प्रभाव से यह सबसे अच्छा युग हो जायेगा। इस युग का धर्म पवित्र नाम का कीर्तन है; कलियुग के लोगों का उद्धार केवल हरे कृष्ण कीर्तन से होगा।

प्रभुपाद के कार्यकलापों से लगता है कि वे कृष्ण द्वारा शक्तिप्रदत्त थे। यह उनके बाल्यकाल से प्रमाणित है, जब उन्होंने पाँच वर्ष की अवस्था में रथयात्रा उत्सव मनाया था और यह निश्चय ही उनके १९६८-१९७१ कालावधि के वर्षों से प्रमाणित है, जब उन्होंने अपने कृष्णभावनामृत आन्दोलन का विस्तार किया। प्रभुपाद इस्कान की तुलना कृष्ण के वराह अवतार से करते थे, जो प्रारम्भ में एक अंगूठे से भी छोटे थे, परन्तु शीघ्र ही बढ़कर आधे ब्रह्माण्ड में फैल गये थे।

इस्कान का तीव्र विकास न तो तेज संचार और आधुनिक यात्रा-साधनों के कारण हुआ, न ही उसके संस्थापक-आचार्य की भौतिक प्रबन्ध-कुशलता के कारण। सांसारिक दृष्टि से प्रभुपाद का मूल्यांकन करने पर वे ऐसे व्यक्ति नहीं थे, जो एक विश्वव्यापी आन्दोलन का संचालन कर सकता था, इतनी अधिक यात्राएँ कर सकता था, इतनी अधिक पुस्तकें लिख सकता था और हर महाद्वीप में हजारों शिष्यों को प्रशिक्षण दे सकता था। वे एक सीधे-सादे, नियमित जीवन से सन्तुष्ट थे; उन्हें संगीत, शृंगार, खेल-कूद, राजनीति, कला, व्यंजन आदि सांस्कृतिक वस्तुओं में अरुचि थी—जो कुछ भी कृष्ण से अलग था। वे इसलिए कार्य करते रहे और यात्रा करते रहे कि उनकी बड़ी तीव्र इच्छा थी कि वे संसार को वास्तविक संस्कृति का लाभ दें और भौतिकतावादी समाज की मरुभूमि में आध्यात्मिक संस्कृति का पौधा रोपें।

अस्तु, यह स्वीकार कर लेने पर कि प्रभुपाद में कोई सांसारिक महत्त्वाकांक्षा नहीं थी, हम समझ सकते हैं कि विश्वव्यापी प्रचार और आध्यात्मिक आन्दोलन के प्रसार के प्रति उनकी रुचि सर्वथा दिव्य थी। वे केवल परम भगवान् कृष्ण की इच्छाओं की पूर्ति के लिए कार्य-मग्न थे।

श्रील प्रभुपाद अपने आपको अपने गुरु, श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती का सेवक मानते थे, उन्हीं के सन्देश का संवहन वे कर रहे थे, उनका यह सन्देश, जो भगवान् कृष्ण का भी सन्देश था, गुरु-शिष्य परम्परा से प्राप्त हुआ था : "हम सभी आध्यात्मिक आत्माएँ हैं, श्री भगवान् कृष्ण के शाश्वत सेवक हैं। हम आत्मविस्मृति में पतित हो गये हैं और इस भौतिक संसार में जन्म-जन्मांतर से दुख भोग रहे हैं। हरे कृष्ण जपकर, हम भगवान् से अपने खोए हुए सम्बन्ध को पुनः स्थापित कर सकते हैं।"

अमेरिका में प्रभुपाद को प्रथम सफलता प्राप्त हुई, तो भारत में उनके कुछ गुरु-भाइयों ने उनके कार्य का महत्त्व घटाना चाहा। उन्होंने कहा कि भक्तिवेदान्त स्वामी की प्रकृति ऐसी थी, जो निम्न वर्गीय पाश्चात्य युवकों से मिलने-जुलने के अनुकूल थी। किन्तु तथ्य यह है, जैसाकि प्रभुपाद के अनुभव से भी प्रमाणित है, कि जिस युवा वर्ग में वे धर्मोपदेश करते थे, वह कोई विशेष ग्रहणशील नहीं था, न ही वे ऐसे समय पर पहुँचे थे

कि लोग उनका स्वागत करते और विनम्र शिष्यों के समूह के समक्ष *श्रीमद्भागवत* पर उनका व्याख्यान सुनते। उन्हें सफलता मिली तो केवल उनके महान् धैर्य, सहिष्णुता और दयालुता के कारण।

इसलिए यह जेट–वायुयान का आगमन नहीं था (यद्यपि प्रभुपाद ने प्रसन्नतापूर्वक उसका लाभ उठाया) न कोरा संयोग था, न भाग्य था, न ही यह कोई सामाजिक या ऐतिहासिक घटना थी, जिसने प्रभुपाद को इस योग्य बनाया कि वे पूर्व से पश्चिम तक और पूर्व में पुनः वैदिक संस्कृति का प्रसार कर सके। नहीं, यह कृष्ण की इच्छा थी और थी उनके सेवक की पूर्ण निष्ठा थी।

चैतन्य चरितामृत कहता है कि जब तक किसी को कृष्ण–शक्ति न मिली हो, तब तक वह पवित्र नाम के कीर्तन का प्रचार नहीं कर सकता

कलि–कालेर धर्म—कृष्ण–नाम सङ्कीर्तन।
कृष्ण–शक्ति विना नहे तार प्रवर्तन॥

"कलियुग में मुख्य धार्मिक विधान कृष्ण के पवित्र नाम का कीर्तन है, जब तक कृष्ण–शक्ति न मिले, कोई संकीर्तन आन्दोलन का प्रचार नहीं कर सकता। (चैतन्य चरितामृत ७.११) इस श्लोक में भगवान् चैतन्य महाप्रभु के साथ चैतन्य महाप्रभु के सेवक श्रील प्रभुपाद का भी वर्णन है। यदि श्रील प्रभुपाद कृष्ण से शक्ति न पाते, तो वे इतने अधिक लोगों को हरे कृष्ण कीर्तन के लिए अनुप्रेरित न कर सके होते।

वैदिक साहित्य के अनुसार जब कोई व्यक्ति असाधारण आध्यात्मिक शक्ति, कृष्ण–शक्ति, से समन्वित होता है, तो उसे *शक्त्यावेश* अवतार कहते हैं। यद्यपि अवतार शब्द से सामान्यतया भगवान् के अवतारों का बोध होता है, पर शक्त्यावेश अवतार ऐसे व्यक्ति के लिए प्रयुक्त होता है, जो भगवान् द्वारा इस संसार में भगवान् के मिशन को पूरा करने के लिए शक्ति–प्रदत्त होता है।

शक्त्यावेश–अवतारों और उनके विशेष कृत्यों का वर्णन वैदिक साहित्य में मिलता है। उदाहरण के लिए, सम्राट पृथु के पास भगवत्–चेतना–युक्त शासन की शक्ति थी, चार कुमारों को दिव्य ज्ञान की शक्ति प्राप्त थी और नारद मुनि में प्रेमाभक्ति की शक्ति थी। भगवान् बुद्ध भी, जिनके नाम और कार्यकलापों का वर्णन *श्रीमद्भागवत* में है, एक शक्त्यावेश–अवतार थे। और वैदिक संस्कृति के बाहर अन्य दैवी शक्ति सम्पन्न महापुरुष भी, जैसे ईसामसीह, एवं मुहम्मद, वैष्णव आचार्यों द्वारा शक्त्यावेश–अवतार के रूप में स्वीकार किये जाते हैं।

श्रील प्रभुपाद के १९६८ और १९७१ के मध्य के कार्यकलाप उन्हें शक्त्यावेश-अवतार के रूप में स्थापित करते हैं और वे धर्मशास्त्रों की इस भविष्यवाणी को पूरा करते हैं।

पृथिवीते आछे यत नगरादि ग्राम।
सर्वत्र प्रचार हइबे मोर नाम॥

"संसार-भर में सभी गाँवो और नगरों में, सर्वत्र भगवान् चैतन्य के संकीर्तन आन्दोलन का प्रचार होगा।"

धार्मिक इतिहास के दृष्टिकोण से भी प्रभुपाद द्वारा प्रचार-कार्य भगवान् चैतन्य के उद्देश्य की पूर्ति था, जो पश्चिम बंगाल में कृष्णभावनामृत के पश्चिम में आने के करीब पाँच सौ वर्ष पूर्व प्रकट हुए थे। वैदिक साहित्य और वैष्णव आचार्य सहमत हैं कि भगवान् चैतन्य स्वयं श्री भगवान् कृष्ण हैं, जो इस युग में भगवान् के शुद्ध भक्त के रूप में प्रकट हुए। और जैसे भगवान् कृष्ण अपने पूर्णांश, भगवान् बलराम के साथ प्रकट हुए थे, वैसे ही भगवान् चैतन्य, भगवान् बलराम के कलियुगी अवतार, भगवान् नित्यानन्द के साथ प्रकट हुए।

श्रील प्रभुपाद को न केवल सामान्यतः भगवान् के शक्त्यावेश प्रतिनिधि, वरन् विशेषकर भगवान् नित्यानंद के प्रकट रूप माने जाने चाहिए। गौड़ीय वैष्णव दर्शन के अनुसार भगवान् कृष्ण सामान्य व्यक्तियों के आत्माओं को भगवान् नित्यानन्द के माध्यम से दर्शन देते हैं। व्यष्टि आत्मा भगवान् का साक्षात्कार करने के लिए भगवान् की सहायता की अपेक्षा रखता है। यह सहायता भगवान् नित्यानंद की अहैतुकी कृपा से प्राप्त होती है, जो इस कारण आदि गुरु कहे जाते हैं। यद्यपि भगवान् नित्यानंद भगवान् चैतन्य के स्वांश प्रसार हैं, पतित आत्माओं का उद्धार करके भगवान् चैतन्य की सेवा करना ही उनकी लीला थी।

भगवान् नित्यानंद और उनके प्रतिनिधि, गुरु महाराज शास्त्रों अथवा भगवान् कृष्णकी शिक्षाओं में कोई परिवर्तन नहीं करते, प्रत्युत उन्हें अधिक सुगम और सुबोध बनाते हैं। भगवान् चैतन्य ने प्रत्येक द्वार पर पवित्र नाम का कीर्तन करने के लिए भगवान् नित्यानन्द को नियुक्त किया और भगवान नित्यानंद की आदर्श और सशक्त एवं संवेदनशील धर्मोपदेश वाली चित्तवृत्ति जैसी ही चित्तवृत्ति श्रील प्रभुपाद की भी थी। चूँकि श्रील प्रभुपाद ने अपनी यह चित्तवृत्ति अपने भक्तों में भी पैदा की, इसलिए वे भक्त भी भगवान् के पवित्र नाम का अनुग्रह हर एक को बाँटने के लिए संसार-भर के नगरों की सड़कों में घूमते फिरे।

भगवान् नित्यानंद विशेष रूप में इस बात के लिए विख्यात हैं कि उन्होंने दो

पियक्कड़ भाइयों जगाई और माधाई को बचाया था, यद्यपि उन दोनों ने उन पर आक्रमण कर दिया था, जब भगवान नित्यानन्द ने दोनों भाइयों को पवित्र नाम का वरदान देने का प्रयत्न किया था। भगवान् नित्यानंद के समय में प्रभुपाद ने कई अवसरों पर कहा था कि जगाई-माधाई केवल एक थे, लेकिन अब तो सारा संसार जगाइयों और माधाइयों से भरा है। और प्रभुपाद अपने शिष्यों का चुनाव इन्हीं जगाइयों और माधाइयों से कर रहे थे। श्रील प्रभुपाद पवित्र नाम के वितरण का खतरा उठाते समय भगवान् नित्यानन्द की तरह सभी तरह की दयालुता का प्रदर्शन करते थे।

भगवान् नित्यानन्द स्वयं भी भारत में अपने आविर्भाव-काल में, इतने अधिक पतित आत्माओं तक नहीं पहुँचे थे, जितने का उद्धार श्रील प्रभुपाद ने किया। न ही भगवान् नित्यानन्द की पहुँच जीवन की इतनी निकृष्ट अवस्था में पड़े हुए आत्माओं तक या संसार के इतने अधिक तिरस्कृत भागों तक हुई थी। किन्तु अब वे अपने प्रतिनिधि श्रील प्रभुपाद के माध्यम से पहुँच गये हैं। गौर-निताई (भगवान् चैतन्य और भगवान् नित्यानन्द) के संयुक्त अनुग्रह के प्राप्तकर्ता के रूप में श्रील प्रभुपाद ने संसार को भगवान् के प्रेम का वरदान दिया।

किन्तु श्रील प्रभुपाद ने सार्वजनिक रूप में या अपने शिष्यों के बीच अपने आपको कभी भी महान् शक्त्यावेश पुरुष नहीं समझा। पर वे इस बात पर बल देते थे कि वे गुरु-शिष्य परम्परा में थे और प्राधिकृत ज्ञान के संवहनकर्ता थे। और वे अपने शिष्यों को ऐसा ही दावा करने को उत्साहित करते थे : "हम बहुत-से शुद्ध भक्त बनाना चाहते हैं, जिससे अन्य लोग उनके संपर्क से लाभान्वित हों। इस तरह से शुद्ध भक्तों की संख्या बढ़ती है।"

प्रभुपाद अच्छी तरह जानते थे कि कृष्णभावनामृत का प्रचार करना कोई व्यावसायिक धंधा नहीं था। यद्यपि भारत में बहुत-से व्यावसायिक व्यक्ति जीविका कमाने के लिए *श्रीमद्भागवत* पर बोलते थे या लिखते थे, किन्तु वे भौतिकतावादी लोगों को प्रेमाभक्ति में नहीं लगा सकते थे। केवल एक शुद्ध भक्त ही भौतिकतावादी हृदय में परिवर्तन ला सकता था।

प्रभुपाद का यह भी निष्कर्ष नहीं था कि वे एक शुद्ध भक्त थे, केवल यह कि वे अपने गुरु महाराज, एक शुद्ध भक्त, श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती के सेवक थे।

प्रभुपाद प्रार्थना करते थे कि इस संसार का त्याग करने के पहले वे शुद्ध भक्तों का एक जीवित परिवार बना सकें, जो कृष्णभावनामृत की परम्परागत शिक्षाओं का प्रसार करते रहें और उन्हें परिवर्तित या धूमिल होने से बचा सकें। वे इस बात पर बल देते थे कि कृष्णभावनामृत आन्दोलन के सभी प्रचारक विधि-विधानों का पालन करके कलुषमय जीवन से बच करके और नियमित रूप से हरे कृष्ण का जप करके शुद्ध भक्त बन सकते

थे। उन्होंने कहा कि केवल इसी भाँति भक्त अन्य लोगों पर अपना प्रभाव छोड़ सकते थे।

• • •

अक्तूबर १८, १९७१

अफ्रीका में व्यस्त पांच-सप्ताह व्यतीत करने के बाद प्रभुपाद भारत की यात्रा के लिए तैयार थे। उनकी योजना बम्बई, कलकत्ता और दिल्ली जाने की थी। भारत में उन्होंने इस्कान के लिए अच्छी शुरूआत की थी—मायापुर में उन्होंने जमीन पा ली थी और बम्बई, कलकत्ता और नई दिल्ली में केन्द्र खुल गये थे और उनके शिष्यों के दल भारत के अन्य भागों में महत्त्व के स्थानों में नियुक्त थे। भारतीयों से इस्कान को मान्यता मिल गई थी और वे उसके उत्सवों, कीर्तनों और प्रसादों को पसन्द करने लगे थे। आजीवन सदस्य उसे अपनी सेवाएँ देने लगे थे और उससे लाभ उठाने लगे थे। वे इस्कान के प्रकाशनों को प्राप्त करने और पढ़ने लगे थे। इस्कान केन्द्रों की सहायता में वे हाथ बँटाने लगे थे।

और यह केवल शुभारंभ था। पाँव जमा लेना—वह भारत, अफ्रीका, अमेरिका, रूस या कहीं भी हो—निश्चय ही एक बड़ी उपलब्धि थी। किन्तु केवल पाँव जमाना ही काफी नहीं था। यद्यपि भगवान् चैतन्य के मिशन की स्थापना के लिए बहुत कुछ किया जा चुका था, किन्तु उससे भी अधिक कुछ और करना अभी बाकी था। कृष्णभावनामृत का प्रचार ऐसा कार्य नहीं था, जो एक बिन्दु पर पहुँचकर पूरा हो जाने वाला था।

पर एक अर्थ में वह समाप्त और पूरा हो चुका था। प्रभुपाद का धर्मोपदेश सदैव सफल रहा था; तब भी जब वे भारत में अकेले संघर्षरत थे कि अपने सन्देश को वे *बैक टु गॉडहेड* पत्रिका, दि लीग आफ डिवोटीज (भक्त संघ) और *श्रीमद्भागवत* के अपने अनुवादों के माध्यम से सुना सके। अपने गुरु महाराज और कृष्ण के दिव्य संघ में वे सदैव दत्तचित्त रहे, इसलिए वे सफल हुए। कृष्णभावनामृत आन्दोलन पूर्णता को प्राप्त हो चुका था और अब उसके निर्माता भगवान् चैतन्य महाप्रभु की इच्छा से यह पूर्णता प्रत्यक्ष हो रही थी। किन्तु उस मिशन की निःस्वार्थ और एकान्त सेवा से सम्बन्धित कार्य उल्लास और समाधि का कोई अन्त नहीं था और वे नित्य बढ़ रहे थे। अब अफ्रीका में भी पाँव जम गये थे, कल वे बम्बई की उड़ान पकड़ेंगे, जहाँ कृष्ण ने उनके पैर पहले ही जमा दिए थे। और जैसाकि कृष्ण की इच्छा थी, वे यात्रा करते रहेंगे, अपने भक्त, पुस्तकें और सन्देश भेजते रहेंगे जब तक कि वे संसार के हर नगर और हर गाँव में नहीं पहुँच जाते। ●

परिशिष्ट

कृष्ण के चरणकमलों की वंदना

(टेक)

कृष्ण तब पुण्य हबे भाइ
ए-पुण्य कोरिबे जबे राधाराणी खुसी हबे
ध्रुव अति बोलि तोमा ताइ

अनुवाद : हे बन्धुओं, मैं आपसे बलपूर्वक कहता हूँ कि आपको भगवान् कृष्ण से सौभाग्य तभी प्राप्त होगा, जब श्रीमती राधाराणी आप पर प्रसन्न होंगी।

श्री सिद्धान्त सरस्वती, शची-सुत प्रिय अति
कृष्ण-सेबाय जार तुल नाइ
सेइ से मोहान्त-गुरू, जगतेर मधे उरु,
कृष्ण भक्ति दे थाइ थाइ

अनुवाद : श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर, जो माता शची-पुत्र महाप्रभु गौरांग के अतिशय प्रिय हैं, परमेश्वर श्रीकृष्ण के प्रति अपनी सेवाओं में अद्वितीय हैं। वे महान् आध्यात्मिक गुरु हैं, जो विश्वभर में स्थान-स्थान पर कृष्ण के प्रति अपनी भाव-प्रवण भक्ति अर्पित करते है।

तार इच्छा बलवान, पाश्चात्ये ते ठान ठान,
होय जाते गौरांगेर नाम

पृथिवीते नगरादि, आसमुद्र नद नदी,
सकलेइ लोय कृष्ण नाम

अनुवाद : महाप्रभु गौरांग की बलवान् इच्छा-शक्ति से उनका पवित्र नाम पाश्चात्य संसार के सभी देशों में फैल जायेगा। पृथ्वी पर सभी नगरों, कस्बों, गाँवो में, सभी महासागरों, समुद्रों, नदियों, नालों से प्रत्येक व्यक्ति कृष्ण के पवित्र नाम का कीर्तन करेगा।

ताहले आनन्द होय, तबे होय दिग्विजय,
चैतन्येर कृपा अतिशय
माया दुष्ट जत दुःखी, जगते सबाइ सुखी,
वैष्णवेर इच्छा पूर्ण होय

अनुवाद : श्री चैतन्य महाप्रभु की अतिशय कृपा की दिग्विजय से दिव्य चेतना का प्रवाह निश्चितरूप से धरती पर फैल जायेगा। जब सभी पापी और दुखी जीव सुखी होंगे, तभी वैष्णवों की इच्छा पूर्ण होगी।

से कार्ज जे कोरिबारे, आज्ञा जदि दिलो मोरे,
जोग्य नहीं अति दीन हीन
ताइ से तोमार कृपा, मागितेचि अनुरूपा
आजि तुमि सबार प्रवीण

अनुवाद : यद्यपि मेरे गुरु महाराज ने मुझे यह कार्य करने की आज्ञा दी थी, किन्तु उसे करने की योग्यता मुझमें नहीं है, मैं अत्यन्त दीन-हीन हूँ। अत: हे भगवन्, मैं आपकी कृपा की याचना करता हूँ कि मुझे योग्य बनाइए, क्योंकि आप सर्वाधिक बुद्धिमान और अनुभवी हैं।

तोमार से शक्ति पेले, गुरु-सेबाय बस्तु मिले,
जीबन सार्थक जदि होय
सेइ से सेवा पाइले ताहले सुखी हले
तब संग भाग्यते मिलोय

अनुवाद : आपसे शक्ति प्राप्त होने पर ही गुरु महाराज की सेवा से यह मनुष्य परम सत्य का दर्शन कर सकता है और अपने जीवन को सफल बना सकता है। सेवा प्राप्त करने से मनुष्य सुख पाता है और सौभाग्य से आपका संग मिलता है।

एवं जनं निपतितं प्रभवाहि-कूपे
कामाभि कामम् अनु यः प्रपतन प्रसंगात्
कृत्वात्मसात् सुरषिणा भगवन् गृहीतः
सोऽहं कथं नु विसृजे तव भृत्य सेवाम्

अनुवाद : हे परम पिता परमेश्वर, एक के बाद एक, अनेक सांसारिक इच्छाओं में लिप्त होने के कारण मैं धीरे-धीरे साधारण प्राणियों की भाँति सर्पों से भरे अंध-कूप में गिर रहा था। किन्तु आपके सेवक नारद मुनि ने कृपा करके मुझे अपने शिष्य के रूप में स्वीकार कर लिया और शिक्षा दी कि मैं यह दिव्य पद कैसे प्राप्त कर सकता हूँ। अतः मेरा प्रथम कर्तव्य उनकी सेवा करना है। उनकी सेवा मैं कैसे त्याग सकता हूँ।

(भगवान् नृसिंहदेव के प्रति प्रह्लाद महाराज का निवेदन, *श्रीमद्भागवतम्* ७.९.२८)

तुमि मोर चिर साथी, भुलिया मायार लाठि,
खाइयाचि जन्म-जन्मांतरे
आजि पुनः ए सुजोग जदि होय जोगाजोग,
तबे पारि तुहे मिलिबारे

अनुवाद : हे प्रभु कृष्ण, आप मेरे शाश्वत साथी हैं। आपको विस्मृत करके जन्म-जन्मांतर से मैं माया के प्रहार सहता रहा हूँ। आज यदि आप से पुनः मिलने का सुयोग घटित हो जाये, तो मैं निश्चित रूप से सदा के लिए आप से पुनः मिल सकूंगा।

तोमार मिलने भाइ आबार से सुख पाइ,
गोचारने घुरि दिन भोर
कत बने छुटाछुटि बने खाइ लुटापुटि,
सेइ दिन कबे हबे मोर

अनुवाद : ओ मेरे प्रिय मित्र, आपके साथ मैं एक बार पुनः महान् सुख का अनुभव

करूँगा। सवेरे के समय गायों के चरने के क्षेत्रों और खेतों में मैं इधर-उधर विचरण करूँगा। व्रज के अनेक वनो में दौड़ता और क्रीड़ा करता मैं दिव्य आनन्द में भूमि पर लोटूँगा। हे प्रभु, वह दिन कब आयेगा?

आजि से सुबिधाने, तोमार स्मरण भेला,
बड़ो आशा डाकिलां ताइ
आमि तोमार नित्य दास, ताइ कोरि एत आशा,
तुमि बिना अन्य गति नाइ

अनुवाद : आज आपका स्मरण बड़े संयोग से हुआ। मुझे आप से बड़ी उत्कण्ठा है, इसलिए मैंने आपको पुकारा है। मैं आपका शाश्वत दास हूँ। इसलिए आपके संग की इतनी अधिक अभिलाषा रखता हूँ। हे भगवान् कृष्ण, आपके बिना मेरी कोई अन्य गति नहीं है। ●

मारकिने भागवत-धर्म

बड़ो-कृपा कइले कृष्ण अधमेर प्रति
कि लागियानिले हेठा कोरो एबे गति

अनुवाद : मेरे परम प्रिय भगवान् कृष्ण, आप इस अधम प्राणी के प्रति कितने कृपालु हैं! किन्तु मैं यह नहीं जानता कि आप मुझे यहाँ क्यों लाए हैं। अब आप मेरी जो गति चाहें, करें।

आचे किछु कार्ज तब एइ अनुमाने
नहे केनो आनिबेन एइ उग्र-स्थाने

अनुवाद : मेरा अनुमान है कि आपका यहाँ कुछ कार्य है, अन्यथा आप मुझे इस उग्र स्थान में क्यों लाते?

रजस तमो गुणे एरा सबाइ आछन्न
बासुदेब-कथा रुचि नहे से प्रसन्न

अनुवाद : इस स्थान में अधिकतर प्राणी राजसी-तामसी गुणों में लिप्त हैं। भौतिक जीवन में आत्म-विस्मृत वे अपने आपको बहुत सुखी और सन्तुष्ट मानते हैं। इसलिए उनके मन में वासुदेव के दिव्य सन्देश के लिए कोई कामना नहीं उत्पन्न होती। मालूम नहीं वे कैसे इस बात को समझ पाएँगे।

तबे जदि तब कृपा होय अहैतुकी
सकल-इ सम्भव होय, तुमि से कौतुकी

अनुवाद : मैं जानता हूँ कि आप की अहैतुकी कृपा से सब कुछ सम्भव है, क्योंकि आप बड़े ही कुशल रहस्यवादी हैं।

कि भावे बुझाले तारा बुझे सेइ रस
एत कृपा कोरो प्रभु कोरि निज-बश

अनुवाद : लोग भक्ति के रस की मृदुता कैसे समझेंगे? हे भगवन्, मैं केवल आपकी कृपा की याचना करता हूँ, जिससे मैं आपके सन्देश के विषय में लोगों को आश्वस्त कर सकूँ।

तोमार इच्छाय सब होय माया-बश
तोमार इच्छाय नाश मायार परश

अनुवाद : आपकी इच्छा से ही सभी प्राणी माया के बन्धन में पड़े हैं। अत: आपकी इच्छा होने पर ही वे माया के बन्धनों से मुक्त हो सकते हैं।

तव इच्छा होय जदि तादेर उद्धार
बुझिबे निश्चइ तबे कथा से तोमार

अनुवाद : मेरी प्रार्थना है कि आप उनका उद्धार करें। आपकी इच्छा से उद्धार पाने पर ही वे आपके सन्देश को समझ सकेंगे।

भागवतेर कथा से तव अवतार
धीर हइया शुने जदि काने बार बार

अनुवाद : *श्रीमद्भागवत* के शब्द आपके अवतार हैं। यदि कोई धीर पुरुष निष्ठापूर्वक उनका बार-बार श्रवण करे, तो वह आपके सन्देश को ग्रहण करने की योग्यता प्राप्त कर सकता है।

शृण्वतां स्व-कथा: कृष्ण: पुण्य-श्रवण-कीर्तन:।
हृद्यान्त:स्थो ही अभद्राणि विधुनोति सुहृत् सतां॥
नष्ट प्रायेश्व भद्रेषु नित्यम् भागवत-सेवया।
भगवत्युत्तम-श्लोके भक्तिर् भवति नैष्ठिकी॥
तदा रजस-तमो-भावा: काम लोभादयाश् च ये।

चेता एतैर अनाविद्धम् स्थितम् सत्त्वे प्रसीदति॥
एवं प्रसन्न-मनसो भगवद्-भक्ति योगतः।
भगवत्-तत्त्व विज्ञानम् मुक्त संगस्य जायते॥
भिद्यते हृदय-ग्रन्थिश् छिद्यन्ते सर्व-संशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि दृष्ट एवात्मनीश्वरे॥

अनुवाद: *श्रीमद्भागवतम्* (१.२.१७-२१) में कहा गया है, "भगवान् श्रीकृष्ण, जो परमात्मा रूप में प्रत्येक प्राणी के हृदय में निवास करते हैं और निष्ठावान् भक्तों के कल्याणकारी हैं, उस भक्त के हृदय से सभी भौतिक वासनाओं के कलुष धो देते हैं, जो उनके सन्देशों में आनन्द का अनुभव करता है। ये सन्देश, यदि श्रद्धापूर्वक सुने जाएं और उनका जप किया जाये, तो भक्त के हृदय में सद्‌गुणों को उत्पन्न करते हैं। *भागवतम्* के नित्य श्रवण और शुद्ध भक्तों की सेवा से हृदय के समस्त कष्ट नष्ट हो जाते हैं और भगवान् के प्रति जो दिव्य गान से स्तुति करते हैं, उनमें सच्ची भक्ति का स्थायी आविर्भाव होता है। हृदय में प्रेमाभक्ति के स्थायी होने से काम, रजोगुण एवं तमोगुण का लोप हो जाता है। भक्त सद्‌गुणों का साकार रूप बनकर सुख का अनुभव करने लगता है। भौतिक संसर्गों से वह मुक्त हो जाता है, उसे परमात्मा के सच्चे रूप का ज्ञान हो जाता है। इस तरह हृदय की सभी ग्रंथियां और दुर्भावनाएं छिन्न-भिन्न हो जाती हैं और आत्मदर्शन के द्वारा वह कर्म-बन्धन से छूट जाता है।

रजस् तमो हते तबे पाइबे निस्तार
हृदयेर अभद्र सब घुचिबे ताहार

अनुवाद: वह अज्ञान और वासना के प्रभाव से मुक्त हो जायेगा और इस प्रकार उसके हृदय में अड्डा जमाए हुए सभी अनिष्टकारी विचारों का लोप हो जायेगा।

कि को रे बुझाबो कथा बरो सेइ चाहि
खुद्र आमि दीन हीन कोनो शक्ति नाहि

अनुवाद: मैं उनको कृष्णभावनामृत का सन्देश कैसे समझाऊँ? मैं स्वयं बहुत अभागा, अयोग्य और पतित हूँ। अतएव मैं आपके आशीर्वाद की याचना करता हूँ, जिससे मैं उन्हें आश्वस्त कर सकूँ, क्योंकि अपने मैं कुछ भी करने में असमर्थ हूँ।

अथच एनेचो प्रभु कथा बोली बारे
जे तोमार इच्छा प्रभु कोरो एइ बारे

अनुवाद : हे प्रभु, येनकेन प्रकारेण आप मुझे यहाँ लाए हैं कि मैं आपकी कथा लोगों को सुनाऊँ। अब यह आप पर निर्भर करता है कि मैं सफल होता हूँ या विफल।

अखिल जगत्-गुरु! बचन से आमार
अलंकृत कोरिबार खमता तोमार

अनुवाद : हे जगत नियन्ता प्रभु, मैं आपके उपदेशों का केवल पुन: कथन कर सकता हूँ। अतएव, यदि आपकी इच्छा हो तो मुझे ऐसी वाणी दें कि मैं लोगों को आपका सन्देश समझा सकूँ।

तब कृपा ह ले मोर कथा शुद्ध हबे
शुनिया सबार शोक दु:ख जे घुचिबे

अनुवाद : केवल आपकी अहैतुकी कृपा से ही मेरी वाणी पवित्र हो सकती है। मुझे विश्वास है कि जब आपका दिव्य सन्देश उनके हृदयों में प्रवेश करेगा, तो वे निश्चित रूप से प्रसन्नता का अनुभव करेंगे और जीवन के शोक तथा दुखों से मुक्ति पाएँगे।

आनियाचो जदि प्रभु आमारे नाचाते
नाचाओ नाचाओ प्रभु नाचाओ से-मते
काष्ठेरा पुत्तली जथा नाचाओ से-मते

अनुवाद : हे प्रभु, मैं आपके हाथ में एक पुतली की तरह हूँ। अत: यदि आप मुझे यहाँ नचाने के लिए लाए हैं, तो नचाइए, नचाइए। आप जिस तरह चाहें, हे प्रभु, मुझे नचाइए।

भक्ति नाइ बेद नाइ नामे खूब डरो
"भक्तिवेदान्त" नाम एबे सार्थक कोरो

अनुवाद : मुझ में न भक्ति है और न ज्ञान। किन्तु कृष्ण के पवित्र नाम में मेरा पूर्ण विश्वास है। मेरा नामकरण भक्तिवेदान्त हुआ है और अब, यदि आप चाहें तो आप भक्तिवेदान्त नाम को सार्थक कर सकते हैं। ●

श्रील प्रभुपाद का भारत में (१९३९-१९६५) लेखन-कार्य

बैक टु गॉडहेड

भाग १, २, ३, ४ (१९४४) : "फर्स्ट अपीयरेन्स आन दी व्यासपूजा डे १९४४" (४४ पृष्ठ की विशेष पुस्तिका)

"मैसेज आफ हिज डिवाइन ग्रेस" (बंगाली भाषा से अनूदित)

"मैसेज आफ ठाकुर भक्ति विनोद" (बंगाली भाषा से अनूदित)

"बैक टु गॉडहेड (संपादकीय)

"गॉडहेड एण्ड हिज पोटेन्शियेलिटीज"

"थियोसोफी ऐण्डस इन वैष्णीवज्म"

"दि साइन्स आफ काङ्गरिगेशनल चाण्टिग आफ दी नेम आफ दी लार्ड"

खंड १, भाग २ (अक्टूबर १९४४)

"थैंक्स टु दी गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया"

"गांधी-जिन्नह टाक्स"

"श्रीमान् चर्चिल्स ह्यूमेन वर्ल्ड"

"श्रीमान् बरनार्ड शास विशफूल डिजायर"

"स्पाण्टेनियस लव आफ गॉडहेड"

खंड १, भाग ९ (१६ फरवरी १९५२)

"फर्स्ट अपीयरेन्स आन दी व्यास पूजा डे १९४४... रिअपीयरेन्स आन दी सिक्सटीन्थ फरवरी १९५२"

"परमहंस श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी महाराज"

"कर्मयोग आफ भगवद्गीता"

"थियोसोफी कन्फ्यूडिड! (क्रमशः)"

बैक टु गॉडहेड (क्रमशः)

खंड ३, भाग १ (१ मार्च १९५६)

"दि एस. आर. सी केटस्ट्रोफी"

"डेकोरेशन आफ दी डेड बॉडी"

खंड ३, भाग २ (१६ मार्च १९५६)

"हू इज ए साधु?"

खंड ३, भाग ३ (५ अप्रैल १९५६)

"दि लोएस्ट आफ दी मैनकाइन्ड"

"लार्ड श्री चैतन्य ; हिज वेल्फेयर एक्टीविटीज"

खंड ३, भाग ४ (२० अप्रैल १९५६)

"फिलोसोफिकल प्राब्लेम्स विदइन सोशल अवेयरनेस"

"गाडलैस क्रियेशन : ऐन एथीस्टिक एण्ड डेंजरस थियरी"

"हयूमन वेल्फेयर एक्टीविटीज"

खंड ३, भाग ५ (५ मई १९५६)
"सफरिंग्स आफ ह्यूमेनिटी : इज प्रोविडेन्स रिस्पोंसिबल फार इट?"
"कान्सेप्शन आफ यूनिवर्सल ब्रदरहुड"
"लार्ड बुद्ध : दी एम्बलेम आफ थीइजम"
खंड ३, भाग ६ (२० मई १९५६)
"यज्ञ ऑर सेक्रीफाइस फार दी सुप्रीम : कान्सेप्शन आफ क्लासलेस सोसायटी"
"हाऊ टु ब्राडकास्ट दी टीचिंग्स आफ भगवद्गीता?"
"ग्रो मोर फूड"
खंड ३, भाग ७ (५ जून १९५६)
"रिलिजन परिटेन्शियस एण्ड रिलिजन रियल"
"दि एट स्टेंजाज आफ हिज लार्डशिप श्री चैतन्य महाप्रभु"
"प्योरिटी आफ कण्डेक्ट बेसिक प्रिन्सीपल आफ ह्यूमन सिविलाइजेशन"
"हाऊ टु ब्राडकास्ट दी टीचिंग्स आफ भगवद्गीता" (भाग २)
खंड ३, भाग १९ (५ मई १९६०)
भाग १६ से (क्रमशः)
"चैतन्य चरितामृत, ऐसेज एण्ड टैक्स्ट"
"भक्तिरसामृत सिंधु"
खंड ३, भाग २० (२० मई १९६०)
"भक्तिरसामृत सिंधु" (क्रमशः)
"चैतन्य चरितामृत : निबंध एवं गद्य" (क्रमशः)
खंड ३, भाग २१ (५ जून १९६०)
"भक्तिरसामृत सिंधु" (क्रमशः)
"चैतन्य चरितामृत : निबंध एवं गद्य" (क्रमशः)
खंड ३, भाग २२ (५ जुलाई १९६०)
"भक्तिरसामृत सिंधु" (क्रमशः)
"चैतन्य चरितामृत : निबंध एवं गद्य" (क्रमशः)
खंड ३, भाग २३ (२० जुलाई १९६०)
"सनातन धर्म इज दी रिलिजन आफ आल लिविंग एन्टाइटीज"
"श्री ईशोपनिषद्"
खंड ३, भाग २४ (५ अगस्त १९६०)
"श्री ईशोपनिषद्" (क्रमशः)
खंड ४, भाग १ (५ सितंबर १९६०)
"श्री ईशोपनिषद्" (क्रमशः)
ईजी जर्नी टु अदर प्लेनेट्स
देहली, लीग आफ डिवोटीज (१९६०)
गौड़ीय पत्रिका (बंगाली में)
खंड १, क्रमांक २ (अप्रैल १९४९)
"लैटर आफ एप्रीसिएशन टु केशव महाराज फार हेविंग रिसीव्ड फर्स्ट एडीशन आफ गौड़ीय मैगेजीन"
खंड १, क्रमांक ५ (जुलाई १९४९)
"रिप्लाई टु श्रीयुक्त जितेन्द्र नारायण वसुस क्वेश्चन्स"
खंड १, क्रमांक ६ से खंड २, क्रमांक ८ तक
(अगस्त १९४९-अक्टूबर १९५०)

"टापिक्स आफ दी सुप्रीम लार्ड"
खंड ३, क्रमांक १ से खंड ४, क्रमांक ८ तक (मार्च १९५१-अक्टूबर १९५२)
"टापिक्स आफ भक्तियोग"
खंड ४, क्रमांक ९ एवं क्रमांक १० (नवंबर एवं दिसंबर १९५२)
"टापिक्स आफ ज्ञानयोग (खंड ६, क्रमांक १० में जारी)
खंड ५, क्रमांक १ (फरवरी १९५३)
"प्ले आफ रिनंसिएशन"
खंड ५, क्रमांक २ (अप्रैल १९५३)
"रिव्यु आफ वेरियस बुक्स"
"क्रिटिसिजम आफ लीला-कीर्तन"
खंड ५, क्रमांक ४(जून १९५३)
आर्टिकल अनाऊसिंग दी स्टार्ट आफ दी लीग आफ डिवोटीज- १६ मई १९५३
खंड ५, क्रमांक ७ (सितंबर १९५३)
"दि मेगनेनिमिटी आफ लार्ड चैतन्य"
खंड ६, क्रमांक १० से क्रमांक १२ तक
(दिसंबर १९५४-फरवरी १९५५)
"टापिक्स आफ ज्ञानयोग (खंड ४, क्रमांक १० से आगे)
खंड ७, क्रमांक ६ और क्रमांक ७ (अगस्त और सितंबर १९५५)
"लाइफ आफ दी भागवत"
खंड ७, क्रमांक ८ (अक्तूबर १९५५)
"मेटिरियल लाइफ"
खंड ७, क्रमांक ११ (जनवरी १९५६)
"दि डिवोशन आफ गोपन्नर (ए ग्रेट डिवोटी आफ लार्ड रामचन्द्र)
खंड ९, क्रमांक १ और २ (मार्च, अप्रैल १९५७)
"श्रीकृष्ण, दी नोअर आफ दी वेदास"
खंड ९, क्रमांक ३ (मई १९५७)
"दि ऐरर आफ दी गीताप्रेस"
खंड ९, क्रमांक ६ से क्रमांक ८ तक (अगस्त-अक्तूबर १९५७)
"दि आइडेण्टिटी एण्ड एक्स्टेण्ट आफ सिन"
खंड ९, क्रमांक १२ (फरवरी १९५८) एवं खंड १०, क्रमांक ३, ४, ५, ८ और १२ (मई १९५८-फरवरी १९५९)
"दि ऐरर आफ दी सेजज (क्रिटिकल रिव्यु आफ डॉ. राधा-कृष्णन्स गीता कामेन्ट्री)"
खंड १०, क्रमांक ९ और १० (नवंबर एवं दिसंबर १९५८)
"पोयम आन वृन्दावन वर्शिप (भजन)
खंड १०, क्रमांक ११ (फरवरी १९५९)
"एट स्टेन्जाज आन सेपेरेशन फ्राम भक्तिसिद्धान्त सरस्वती"
खंड ११, क्रमांक १ एवं २ (मार्च और अप्रैल १९५९)
"दि फालेन ब्राह्मण आर 'पुअर नारायण' : इन ओपोजीशन टु ऐन आर्टिकल बाई डॉ. श्री नलिनी रंजन सेन"
खंड ११, क्रमांक ३ (मई १९५९)
"दि अटोमिक लिविंग एन्टिटी एण्ड दी सुप्रीम लार्ड"
खंड ११, क्रमांक ४ और क्रमांक ५ (जून और जुलाई १९५९)
"दि स्पिरिच्युल स्काई"

खंड ११, क्रमांक ८ (अक्तूबर १९५९)
"दि प्रेयर आफ एम्परर कुलशेखर"
संन्यास की मान्यता पर लेख
खंड ११, क्रमांक ९ (नवंबर १९५९)
"दि प्रेयर आफ एम्परर कुलशेखर (क्रमशः)
"टू संन्यासीज मुनि महाराज एण्ड स्वामी महाराज"
खंड ११ क्रमांक १० और ११ (दिसंबर १९५९ एवं जनवरी १९६०)
"दि परेयर आफ एम्परर कुलशेखर" (क्रमशः)
खंड ११, क्रमांक १२ (फरवरी १९६०)
"दि मार्डर्न साइंटिस्ट्स डिस्कवरी आफ दी सुप्रीम लार्ड्स अबोड (धाम)"
खंड १४, क्रमांक ४, ७ तथा ८ (जून, सितंबर और अक्तूबर १९६२)
"श्री गीता-गान"
श्रीमद्भागवतम्, खंड १
देहली, दी लीग आफ डिवोटीज (१९६२)
श्रीमद्भागवतम्, खंड २
देहली, दी लीग आफ डिवोटीज (१९६४)
श्रीमद्भागवतम्, खंड ३
देहली, दी लीग आफ डिवोटीज (१९६५)
विविधा (प्रकाशित)
१९३६ :
"श्रीव्यास पूजा होमेज" (हारमोनिस्ट में प्रकाशित)
१९४९ :
निबंध "दि प्रीचिंग आफ गौड़ीय वैष्णव धर्म आटसाइड बंगाल"
१६ मार्च १९५३ :
निबंध, "दि प्रीचिंग आफ गौड़ीय वैष्णव धर्म आउट साइड बंगाल" (पिछले निबंध से भिन्न)
७ जुलाई १९५३ :
पत्र; हिन्दू मिशनरीज (इलाहाबाद में अमृत बाजार पत्रिका में प्रकाशित)
१९६४ :
निबंध, "रिक्रिएशन आफ मैन" (इण्डियन फिलासोफी एण्ड 'कल्चर', खंड ९ में प्रकाशित)
तिथिरहित निबंध :
"दि क्योर फार दी मेटीरियल डिजीज"
"ए ग्लोरिफिकेशन आफ डिवोशनल सर्विस"
"गाड इज अलाइव"
"दि ट्रू आयडेण्टिटी आफ दी लिविंग बीईंग"
विविधा (अप्रकाशित निबंध)
२१ अप्रैल १९३९ :
"इंट्रोडक्शन टु गीतोपनिषद्"
१९५० :
"मैन इज दी आर्कीटेक्ट आफ हिज ओन फार्चुन..."
(निबंध-भाग, २४ सामायिक विश्व-संकटों की सूची सहित)
५ फरवरी १९५० :
"लव अफेअर्स आफ श्रीकृष्ण, दी सुप्रीम लार्ड"

"साइंस आफ डिवोशन (भक्तिरसामृत सिंधु)"
(तैतीस भागों में संकलित, भक्तिरसामृत सिंधु के पहले अध्याय का सारांश अध्ययन)
"सेक्रेटरी-मिनिस्ट्री आफ ऐजुकेशन"
१० सितंबर १९५९
"सोल्यूशन आफ प्रैजेण्ट क्राइसिस बाई भगवद्गीता : ट्वेण्टी-एट पोआईंट्स"
५ मार्च १९५२
"काट्रीब्यूशन आफ लार्ड चैतन्य टु दी पीपल आफ दी वर्ल्ड" ८ जून १९५२
१९५५
"डिवाईन रिलेशन"
"लाइट आफ दी भागवत" (तात्पर्य सहित पचास उदाहरण)
"मैन मेड प्लेनेट ?"
"मैसेज आफ गॉडहैड"
६ दिसंबर १९५५
"राय बहादुर"
"टेम्पल एण्ट्री मूवमेण्ट"
१९५७
काला बाजार करने वालों पर निबंध (हस्तलिखित) १९५७
बिना शीर्षक का निबंध (हस्तलिखित)
"व्हाट इज दी मैटर विद दी वर्ल्ड ?"
१९५८-५९ (लगभग)
"ऐन अनेलिसिस आफ भगवद्गीता"
"कन्सेप्शन आफ गीता नागरी आन दी प्रिंसीपल्स आफ गांधी"
"इण्टरप्रेटेशन्स आफ भगवद्गीता"
"नॉलेज ट्रांसिडेन्टल"
"लिबरेशन इन प्रेक्टिस"
"मिसयूस आफ प्रब्लिक फण्डस इन दी नेम आफ रिलिजन"
"आब्स्टेकल्स इन दी डिवोशनल पाथ" (लघु लेख)
"पर्फेक्शन ऐट होम—ए नोवेल काण्ट्रीब्यूशन टु दी फालेन ह्यूमेनिटी"
"ए स्टडी आफ भगवद्गीता मीन्स टु लर्न दी ए-बी-सी-डी आफ स्पिरिच्युल साइंस"
भगवान् चैतन्य और रामानन्द राय द्वारा चर्चित मानवीय जीवन के उद्देश्य पर एक बिना शीर्षक का लघु-लेख
नैतिकता और सामाजिक व्यवस्था पर एक बिना शीर्षक लघुलेख
"वर्ल्ड पेसिफिस्ट एण्ड दी भगवद्गीता"
१९६१
"वैशिष्याष्टकम्" (भक्तिसिद्धान्त सरस्वती के महिमागान पर आठ प्रार्थनाएं)
२१ जनवरी १९६१
भगवद्गीता फेक्ट्स एण्ड फिगर्स : (श्लोक-सन्दर्भ सहित सत्रह लघु पैराग्राफ)
तिथिरहित :
"डिवोटी एण्ड दी डिविनिटी"
"डिविनिटी आफ लार्ड चैतन्य" (लघु-लेख)
"ह्यूमन वेल्फेयर एक्टिविटीज"
"शक्तिपूजा" (हस्तलिखित समीक्षा) ●

लेखक-परिचय

सत्स्वरूप दास गोस्वामी का जन्म न्यूयार्क नगर में ६ दिसम्बर १९३९ को हुआ था। उन्होंने पब्लिक स्कूलों में शिक्षा पाई और ब्रुकलिन कालेज से सन् १९६१ में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। तत्पश्चात् उन्होंने संयुक्त राज्य की नौसेना में दो वर्ष तक पत्रकार के रूप में कार्य किया; फिर वे तीन वर्ष तक न्यूयार्क नगर में सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में कार्य करते रहे।

जुलाई १९६६ में उनकी भेंट कृष्णकृपामूर्ति ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद से हुई और उसी वर्ष सितम्बर में वे उनके दीक्षित शिष्य बन गए। सत्स्वरूप दास गोस्वामी हरे कृष्ण आन्दोलन की पत्रिका *बैक टु गॉडहेड* के लिए लेख लिखने लगे और बाद में उसके मुख्य सम्पादक बन गए। अगस्त १९६७ में वे बोस्टन में इस्कॉन का पहला केन्द्र स्थापित करने के लिए गए। १९७० में जब श्रील प्रभुपाद ने अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ का अधिशासी मण्डल गठित किया, तो सत्स्वरूप दास गोस्वामी उसके आद्य सदस्यों में से एक सदस्य बन गए। वे १९७१ तक बोस्टन-स्थित अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के अध्यक्ष बने रहे, उसके बाद वे डल्लास चले गए और वहाँ प्रथम इस्कान-बाल-विद्यालय, गुरुकुल के प्रधानाध्यापक बन गए।

मई १९७२ में भगवान् नृसिंह देव के आविर्भाव-दिवस पर कृष्णकृपामूर्ति श्रील प्रभुपाद द्वारा उन्हें संन्यास आश्रम में दीक्षित किया गया और वे महा-विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में भाषण करते हुए संयुक्त राज्य में भ्रमण करने लगे। जनवरी १९७४ में श्रील प्रभुपाद ने उन्हें अपना निजी सचिव बनाने और अपने साथ भारत और योरोप की यात्रा करने हेतु बुलाया। सन् १९७६ में उन्होंने वैदिक परम्परा का संक्षिप्त परिचय देने वाली पुस्तक 'रीडिंग्स इन वैदिक लिटरेचर' प्रकाशित की। इस पुस्तक का अध्ययन इस समय विभिन्न अमरीकी विश्वविद्यालयों में होता है। सन् १९७७ में श्रील प्रभुपाद ने दस अन्य वरिष्ठ शिष्यों के साथ उन्हें दीक्षा-गुरु के दायित्वों को संभालने का आदेश दिया। कृष्णकृपामूर्ति श्रील प्रभुपाद के जीवन-चरित्र को पूरा करने के पश्चात् उन्होंने प्रचुरता से लेखन-कार्य जारी रखा है। सम्प्रति वे गद्य और पद्य की अनेक पुस्तकों की तैयारी में लगे हैं। ●